शिवरात्रि व्रत कथा महात्म्य

और

काशी महात्म्य सहित विविध रत्न-संग्रह

रचयिता एवं संग्रहकर्ता

स्वामी उमेश्वरानन्द तीर्थ

तीर्थ प्रकाशन

बाईटी मलनाईर मदनी पानी केरी रै पास
सन्जी की दुकान सामने है।

T

HANDRA ART-CARDS, VARANASI.
Bhola Baba

सुप्रभातम्

श्री गणेश प्रातः स्मरणम्

प्रातर्भजाम्यभयदं खलुभक्तशोक, दावानलं गणविभुं वरकुञ्जरास्यम् ।
अज्ञानकाननविनाशन हव्यवाह, मुत्साहवर्द्धनमहं सुतमीश्वराय ॥ १॥

श्री विष्णो प्रातः स्मरणम्

त्रैलोक्यचैतन्यमयादि देव, श्रीनाथविष्णो भवदाज्ञयैव ।
प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं, संसारयात्रामनुवर्तयिष्ये ॥ २ ॥

विविध कार्य के लिए स्मरण

औषधेचिन्तयेद्विष्णुं, भोजने च जनार्दनम् ।
शयने पद्मनाभं च विवाहे च प्रजापतिम् ॥ ३ ॥
युद्धे चक्रधरंदेवं, प्रवासे च त्रिविक्रमम् ।
नारायणं तनुत्यागे, श्रीधरं प्रियसङ्गमे ॥ ४ ॥
दुःस्वप्नेषु च गोविन्दं, संकटे मधुसूदनम् ।
कानने नरसिंहं च, पावके जलशायिनम् ॥ ५ ॥
जलमध्ये वराहं च, पर्वते रघुनन्दनम् ।
काननेवामनं चैव, सर्वकार्येषु माधवम् ॥ ६ ॥
एतानि विष्णुनामानि, प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।
सर्व पाप विनिमुक्तो, विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ७ ॥

संकट नाश के लिए

हरं हरिं हरिश्चन्द्रं, हनुमन्तं हलायुधम् ।
पञ्चक वै स्मरेन्नित्यं, घोरसंकटनाशनम् ॥ ८ ॥

आपन्निवारणार्थं

प्रभाते यस्मरेन्नित्यं दुर्गादुर्गाक्षरद्वयम् ।
आपदस्तस्य नश्यन्तितमसूर्योदये यथा ॥ ९ ॥

आयु प्राप्ति के लिए

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो, हनुमाश्चविभीषणः ।
कृपः परशुरामश्च सप्तै ते चीरजीविनः ॥ १० ॥

T

सप्तैतान् स्मरेन्नित्यं मार्कण्डेय मथाष्टमम् ।
जीवेत् वर्षं सतंसाग्रं सर्वव्याधिविवर्जितम् ॥ ११ ॥

कलिनाशकम्

कर्कोटकस्य नागस्य दमयान्त्यानलस्य च ।
ऋतुपर्णस्य राजर्षे कीर्तनं कलिनाशनम् ॥ १२ ॥

नष्ट वस्तु प्राप्ति के लिए

कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रवान् ।
यस्य संकीर्तयेन्नाम कल्य उत्थाय मानवः ।
न तस्यवित्तनाशस्यान्नष्टं च लभते पुनः ॥ १३ ॥

वस्तु चोरी से रक्षा

तिस्रोभार्याकफल्लस्यदायिनीमोहिनी सती ।
तासां स्मरण मात्रेण चौरो गच्छति निष्फलः ॥ १४ ॥

सर्पभय नाशार्थ

सर्पापसर्प भद्रं ते दूरं गच्छ महाविषः ।
जन्मेजयस्य यज्ञान्ते आस्तिकः वचनस्मर ॥ १५ ॥

सुख शयनार्थ

जलेरक्षतु वाराह स्थलेरक्षतु वामनः ।
अटव्यां नारसिंहश्च सर्वतोऽवतु केशव ॥ १७ ॥

क्लेश क्षयार्थं

कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने ।
प्रणतः क्लेशनाशाय गोविन्दाय नमोनमः ॥ १८ ॥

भोजन प्राप्त्यर्थ

गच्छ गौतम शीघ्रं च ग्रामेषु नगरेषु च ।
आसनं भोजन चैव रथानं मे परिकल्पय ॥ १९ ॥

॥ इति सुप्रभातम् ॥

T

द्वितीय खण्ड

शिवरात्रि व्रतकथा और महात्म्य

मंगलम्

नमः शिवाय शान्ताय शुद्धाय शूलधारिणे ।
नमस्ते शक्तियुक्ताय मंगलाय च वै नमः ॥

ब्रह्माजी ने नारदजी से कहा—हे नारद ! शिवजी के असंख्य व्रत हैं । भुक्ति और मुक्ति दोनों को देते हैं । उन व्रतों को अवश्य करना चाहिये । निम्नांकित व्रत अवश्य सिद्धिप्रद हैं । ये १२ व्रत शिवजीको अतिप्रिय हैं । अष्टमी, दोनों पक्ष की एकादशी, दोनों पक्ष की त्रयोदशी, दोनों चतुर्दशी, एक महीने में जितने सोमवार पड़े, ये सब मिलकर १२ व्रत हैं । अष्टमी को फलाहार करे, एकादशी को निर्जला व्रत करे । दोनों त्रयोदशी में एक बार भोजन करे । कृष्ण पक्ष की एकादशी को एक भुक्त व्रत करे । शुक्ल पक्ष के चतुर्दशी को भी एक भुक्त व्रत करे । कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को निर्जला व्रत करे । दिन एवं रात के सभी पहरों में शिवजी की पूजा करे । सोमवार को शक्ति सहित शिव की पूजा करे । उपरोक्त व्रतों में शिवजी के भक्तों को भोजन देवे । शक्ति के अनुसार दान देवे । इन व्रतों में जो मनुष्य एक भी व्रत नहीं करता, उस पतित के ऊपर शिवजी कभी प्रसन्न नहीं होते । वह मनुष्य दोनों लोकों में दुःखी रहता है । उपरोक्त व्रतों में यदि महीने में एक भी व्रत करता है, वह भी उत्तम है ।

ब्रह्माजी ने कहा—हे नारद ! चार चीजें भुक्ति और मुक्ति देनेवाली हैं—रुद्र जाप, शिवपूजा, शिव का व्रत तथा काशी में मरना । ये चारों शिवजी को परमप्रिय हैं तथा संसार में मनुष्य को बड़ा सुख देनेवाले हैं । उपरोक्त व्रतों में शिवरात्रि का सबसे अधिक महत्त्व है ।

T

शिवरात्रि व्रत महात्म्य

सभो वर्ण-आश्रम तथा जाति के लोग इस व्रत को कर सकते हैं। बाल, युवा तथा स्त्रियाँ भी कर सकती हैं। यह व्रत सकाम-निष्काम दोनों के लिए विहित है। इस व्रत से शिवलोक मिलता है। यह व्रत असंख्य हत्याओं को मिटाने वाला है। असंख्य पुण्यों को देने वाला है। इसकी महिमा का वर्णना शेषनाग और शारदा नहीं कर सकतीं। इस व्रत को करने वालों को मुक्ति मिलती है। इसे व्रतराज कहते हैं। सब व्रत इसको सिर झुकाये रहते हैं। शिवजी को यह व्रत पार्वती के समान प्रिय है।

यज्ञदत्त ब्राह्मण के पुत्र गुणनिधि और स्त्री सुमति तथा व्याध आदि ने अनजान में इसी व्रत को करके उत्तम गति पायी है। यह व्रत प्रत्येक महीने की शिवरात्रि (चतुर्दशी) कृष्ण पक्ष को होता है, किन्तु माघ के महीने में इसको करना अति आवश्यक है। इसी प्रकार फाल्गुन मास की चतुर्दशी भी है। यह शिवरात्रि सर्वोत्तम कही गयी है। आधी रात तक जो तिथि हो, वही शिवरात्रि व्रत के लिए उत्तम है। शिवरात्रि व्रत करके उसी दिन पारण करे तो उत्तम है, किन्तु बड़े भाग्य से उसी दिन 'पारण' मिलता है। चतुर्दशी न मिले तो आमावस्या को भी पारण कर सकते हैं। जो मनुष्य दुर्लभ शिवरात्रि व्रत को नहीं करता, वह घोर नरक में जाता है। शिवरात्रि व्रत करने वालों को देखकर यमराज भी भयभीत रहते हैं। जो शिवरात्रि का व्रत करता है, वह शिव का गण है।

'शिव जी के चारों प्रहर की पूजा विधि'

हे नारद ! अब मैं चारों प्रहरों की पूजा का वर्णन करता हूँ, सुनो— प्रातःकाल उठकर नित्य कर्म करे और अति प्रसन्नता से शिवजी के मन्दिर में जाकर स्तुति करे। पहले परम पवित्रता के साथ जल हाथ में लेकर इस प्रकार संकल्प करे—हे शिवजी मै आपका व्रत करूँगा, वह पूर्ण हो और कोई उसमें विघ्न न हो। फिर पूजन सामग्री एकत्र करके प्रसिद्ध

T

शिवलिङ्ग के समीप जाय, शिवजी के दक्षिण या पश्चिम की ओर आसन लगाकर पूजा की सामग्री रखे। पवित्रता के साथ तीन बार आचमन करके पूजा करे। यथा विधिमन्त्रोच्चारणपूर्वक पूजन करे। नाच-गान आदि के साथ स्तुति करे और शिवजी का मन्त्र जपे। यथाविधि प्रणाम करे। मन्त्रों के साथ पार्थिव पूजा भी करे। जो मनुष्य जिस देवता का पूजन करता है, उस देवता के पूजन के बाद पार्थिव पूजा करे। पुनः स्थापित शिवलिङ्ग का पूजन करे। शिवरात्रि की महिमा स्वयं पढ़े। स्वयं नहीं पढ़ पावे तो दूसरे से सुने। कथावाचक की नाना विधि से पूजन करे। अच्छे-अच्छे नैवेद्य शिवजी को भोग लगाकर चारों प्रहर में संकल्प करके शिवलिङ्ग की पूजा करे। रात्रि जागरणपूर्वक उत्सव करे। सबेरे भी स्नान करके पूजन करे, गाल बजावे, नाचे, बारम्बार दण्डवत करे और स्तुति करे। सिरझुकावे बिनती करे कि मैंने शिवरात्रि व्रत किया, यथा शक्ति उद्योग किया तथा प्रेम से आपमें मन लगाया है, मुझे सेवक जानकर प्रसन्न होकर मेरा मनोरथ पूर्ण करें। शिवजी को बिल्वपत्र अति प्रिय है, अतः अधिक से अधिक मात्रा में चढ़ावे। ऐसा करते हुए शिवजी को पुष्पाञ्जलि समर्पण करे। ब्राह्मणों को दान दे। शिवभक्तों को, द्विजों को तथा यति सन्यासियों को उत्तमोत्तम भोजन करावे। शक्ति के अनु-सार दक्षिणा (विदाई) से प्रसन्न करे। शिवजी का ध्यान करते हुए ब्राह्मणों से आशीर्वाद लेकर पूर्ण होने पर स्वयं भी भोजन करे। धनवान् हो तो अधिक से अधिक धन खर्च करे। इस प्रकार से प्रतिमास शिव-रात्रि का पूजन तथा उद्यापन करना चाहिए।

शिवरात्रि व्रत का उद्यापन

शिवरात्रि व्रत के उद्यापन करने से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। शिव-रात्रि व्रत चौदह वर्ष तक बराबर करके तब विशेष रूप से उद्यापन करे। त्रयोदशी के दिन संयमपूर्वक रहे, चतुर्दशी को अन्न जल रहित व्रत करे। शिवजी का दिव्य धाम (मण्डल) जिसको 'गौरी तिलक' कहते हैं, उसे

T

बनावे, वहाँ पर लिङ्गतोभद्र तथा सर्वतोभद्र बनावे। आठ कलशों को स्थापित करे, फलफूल तथा वस्त्रों से पूर्ण करे, उसके मध्य में एक स्वर्ण कलश रखे, जिसके ऊपर शिव-पार्वती नन्दीश्वर की स्वर्ण की प्रतिमा बनाकर स्थापना करे। शक्ति के अनुसार मूर्ति बनावे, दीप जलाकर दाहिनी तरफ रखे। प्रसन्न मन से रात्रि भर जागरण करे, चारों प्रहरों में पूजा करे। ब्राह्मणों की भी पूजा करके प्रसन्न करे। भोजन करावे, वस्त्र आभूषणों का दान करे। विशेष पूजा आचार्यजी का करे। उन्हें गोदान दे। तीनों सुवर्ण की मूर्तियाँ अन्य सामग्री सहित देकर दण्डवत् प्रणाम करे। शिवजी को पुष्पाञ्जलि चढ़ा कर स्तुति सहित दण्डवत् प्रणाम करे। फिर परिवार सहित ब्राह्मणों की आज्ञा से व्रत पूर्ण करके भोजन करे।

महत्त्व जाने बिना भी शिवरात्रि व्रत करने का फल

प्राचीनकाल में एक व्याध हुआ, उसका नाम निषाद था। वह बड़ा हिंसक था। परिवार सहित रहता था। वनके जीवों को मारता था, धन चोरी करके ले आता था। इस प्रकार वहुत समय बिता। एक दिन घर में भोजन की कोई सामग्री न होने से उसके परिवार ने क्षुधा से व्याकुल होकर कहा कि हमारे लिए भोजन सामग्री ले आओ। यह सुनकर व्याध धनुष बाण लेकर वन की ओर गया। उस दिन महाशिवरात्रि थी। इस व्रत को निषाद नहीं जानता था। उस दिन निषाद को कोई शिकार नहीं मिला। जब रात्रि हुई तब वह दुःखी होकर सोचने लगा अब मैं घर नहीं जाऊँगा। रात्रि में जलाशय के किनारे जल पीने के लिये कोई जन्तु अवश्य आयेगा, उसको मार करके घर ले जाऊँगा। सब परिवार को भोजन कराऊँगा। यह शोचकर वह निषाद एक विल्व के वृक्ष पर चढ़ गया और छिप कर हरिणों की प्रतिक्षा करने लगा। उस रात्रि के प्रथम प्रहर में एक हरिणी प्यासी हुई वहाँ जल पीने आई। निषाद ने तुरन्त उसको मारने के लिये धनुष पर बाँण चढ़ाया। उस समय उस निषाद के शरीर के रगड़ से विल्व के पत्र और शीशी का जल, शिवलिङ्ग में गिरा।

भाग्यवश शिवरात्रि के प्रथम पहर की पूजा हो गयी। निषाद के बहुत जन्मों के पापों का नाश हो गया। उधर हरिणी ने निषाद को देखा और बोली—तुम क्या कह रहे हो निषाद! उसने कहा—मेरे परिवार भूख से पीड़ित हैं अतः तुमको मारकर तेरे मांस से उनको तृप्त करूँगा। यह सुन कर हरिणी चिन्तित हुई और बोली—निषाद! मेरे मांस से तेरा मनोकर पूर्ण होता है तो मैं धन्य हूँ। दूसरों के प्राण बँचाने के बराबर अन्य कोई श्रेष्ठ धर्म नहीं है। मेरे मांस से तुम्हारा परिवार निश्चय तृप्त होगा, पर मेरी एक प्रार्थना है, मेरे घर में छोटे-छोटे बच्चे हैं, उनको मैं अपनी बहिन को सौंप दूँगीं, तब मैं तेरे पास आऊँगी, तुमसे प्रतिज्ञा करके जाती हूँ। अवश्य ही आऊँगीं। सत्य के समान दूसरी कोई वस्तु नहीं है, यदि मैं न आऊँ तो विश्वासघात का पाप लगे। शिवजी का व्रत त्याग करने का पाप लगे। इस प्रकार शपथ खाकर हरिणी चुप हो गयी। निषाद को विश्वास हो गया, उसे जाने का वचन दे दिया। हरिणी जल पीकर अपने घर गई। संयोग से हरिणी की बहिन अपनी बहिन को ढूँढते-ढूँढते वहाँ पर आ पहुँची, उसे देखकर निषाद ने फिर धनुष पर बाँण चढ़ाया उस वक्त निषाद के देह के स्पर्श से विल्वपत्र तथा जल शिवलिङ्ग के ऊपर गिर पड़े, इससे दूसरे प्रहर की शिवजी की पूजा पूर्ण हुई। इससे निषाद के बहुत से पाप नष्ट हो गये। हरिणी ने कहा हे निषाद तुम क्या कर रहे हो। निषाद ने पहले के समान उत्तर दिया। हरिणी डर गयी और उससे बोली हे निषाद! मेरे बड़े भाग्य हैं, क्योंकि यह शरीर नाशवान है, यदि इससे दूसरे को सुख मिले तो इससे अधिक क्या है लेकिन अपनी छोटी बच्ची को पति के हाथ सौंपकर आऊँगी इस तरह बहुत सौगन्ध खाकर खड़ी हुई। तब निषाद ने जाने दिया। हरिणी प्रसन्न होकर पानी पीकर अपने घर गयी। निषाद ने जागरण में दो पहर रात बिता दिया, इधर हरिणी घर नहीं आई तब हरिण चिन्तित हुआ प्यास सें व्याकुल होकर स्वयं ही चला, जब नदी के किनारे पहुँचा तो निषाद ने

T

फिर अपने धनुष पर बांण चढ़ाया इस मुद्रा में निषाद को देखकर हरिण बोला निषाद यह क्या कर रहे हो ! निषाद ने पहले के समान ही उत्तर दिया उसे सुनकर हरिण बोला, मेरे धन्य भाग्य हैं तुम्हारे परिवार को तृप्त करने वाला हूँ जो मनुष्य दूसरों को लाभ नहीं पहुँचाते, उनको संसार में जन्म लेना व्यर्थ है। किन्तु मेरे घर पर छोटा बच्चा है मैं उसे माँ को सौंप दूँ तब तुम्हारे पास आजाउँगा। परन्तु निषाद ने कहा तुम्हारे जैसे और भी बहुत आये थे उन्होंने मुझे धोखा दिया मैं तुम्हें नहीं छोड़ूँगा। हरिण बोला कि मैं कभी झुठ नहीं बोलता हूँ क्योंकि संसार में सत्य का पद बड़ा है। मैं सपथ करता हूँ, तुम्हारे पास अवश्य आ जाऊँगा। नहीं आऊँगा तो मुझे बड़े-बड़े हत्यायें करने का पाप लगे। यह सुनकर निषाद बोला अच्छा जाओ शीघ्र लौंटना, हरिण पानी पीकर अपने घर गया। वहाँ हरिणियाँ अपने बच्चों के साथ एकत्रित होकर अपना-अपना वृतान्त कहकर दुःखी हुई। सत्य तथा धर्म से डरकर सबसे पहले प्रतिज्ञा करके जो हरिणी आइ थी वह अपने पति से बोली, मैंने पहले प्रतिज्ञा की थी इसलिये मैं निषाद के पास जाऊँगी तुम दोनों घर में रहकर बच्चों का पालन पोषण करना। तब दूसरी हरिणी ने कहा, मैं व्याध के पास जाऊँगी, क्योंकि पहली स्त्री घर की स्वामीनी होती है। यह सुनकर हरिण बोला मैं ही स्वयं व्याध के पास जाऊँगा, अपने मांस से उस व्याध के परिवार को तृप्त करूँगा। किन्तु दोनों हरिणियों ने कहा कि हम घर में 'राँड' बनकर नहीं रहना चाहती हैं। धिक्कार है जो विधवा होकर घर में रहती हैं। सब परिवार लड़ते-झगड़ते निषाद के पास चले पीछे से उनके बच्चें भी चले। क्योंकि रक्षक के बिना वे कैसे रह सकते थे। (जो माता-पिता की दशा होगी वही हमारी भी होगी) बधिक ने देखा सभी हरिणों का समूह एक साथ आ रहा है वह प्रसन्नता से पहले की तरह धनुष पर बाँण का अनुसन्धान करने लगा जिससे पहले की भाँति वेलपत्र तथा जल शिवजी के लिङ्ग के उपर गिर पड़े और चौथे प्रहर की पूजा भी पूर्ण हो गयी। इससे व्याध के सम्पूर्ण पाप नष्ट गये। तब दोनों हरिणियों और बच्चों

T

के साथ हरिण बोला हे निषाद ! अब मेरे शरीर को शुद्ध करके हमको मारो। किन्तु व्याध के पाप शिवजी के पूजन से जल चुके थे उसकी वुद्धि शुद्धि हो गयी उसे दया आयी। वह बोला।

हे मृगों के समुदाय ! यद्यपि पशुओं की बुद्धि नहीं होती पर तुम सब धन्य हो, अपने शरीर के नष्ट होने पर भी दुसरे को भलाई करने को तैयार हो और मैंने मनुष्य होकर भी अपना जन्म जीवों का वध करने में बिताया। ऐसा घोर पाप करके परिवार का पालन किया करता हूँ। न जाने मैं किस अवस्था को प्राप्त होऊँगा। मैंने कोई धर्म नहीं किया। ऐसा कहते हुए व्याधने चिन्ता की आँसु बहाई और बोला। हे शुद्ध हरिण, हरिणियों ! अब तुम लोग सब घर जाओ, तुम धन्य हो तुम्हारा घर भी धन्य है। तुम सभी अति उत्तम हो। व्याध ऐसा कह ही रहा था उसी समय शिवजी परम प्रसन्न होकर वहाँ प्रकट हुए और अपने करकमलों से व्याध का हाथ पकड़ कर कहे तुमसे मैं अति प्रसन्न हूँ। तुम्हे जो चाहिये वह वर माँगो। तुमने शिवरात्रि व्रत किया है, तुम्हारे सब पाप नष्ट हो गये। तुम मेरा भक्त हुआ। भगवान् शिव की यह वात सुनकर व्याध जीवन मुक्त हुआ और शिवजी के चरणों में गिर पड़ा। उसके मुख से इतना ही शब्द निकला मैंने सब कुछ पाया। यह सुनकर शिवजी अति प्रसन्न हुए। उसका नाम 'स्कन्द' रखा, बहुत से वरदान दिये और कहा तुम अपने कुल के राजा होओगे शृङ्गवेरपुर को अपनी राजधानी बनाओगे और राज्य करोगे। तुम्हारे वहुत सन्तान होगें उनकी देवता भी प्रशंसा करेगें। मेरे भक्त श्री रामचन्द्रजी तुमको सेवक जानकर तुम्हारे घर पधारेंगे, तुम्हें यश देगें। तुम मेरा भजन कभी मत भूलना। तुमको दुर्लभ मुक्ति मिलेगी। इतनी बातों को सुनकर हरिण के समूह भी मृग योनि का परित्याग करके देवताओं का रूप धारण कर, अशुपाश से मुक्त होकर दिव्य लोक में चले गये। शिवजी भी अन्तर्धान हो गये। और लिङ्ग के रूप में वही 'व्याधेश्वर' के नाम से प्रसिद्ध हुए। आज भी

T

अर्बुद गिरि में वह लिङ्ग प्रसिद्ध है। उसके दर्शन तथा पूजन से भक्ति और मुक्ति मिलती है। निषाद ने श्रीराम का दर्शन तथा शिवजी का दर्शन करके बहुत काल तक सुख भोगा और अन्त में शिवजी का सायुज्य प्राप्त कर लिया। अनजान में शिवरात्री व्रत करने से अनायास ही मोक्ष मिला, बिना ज्ञान का मोक्ष मिलना असम्भव है। जो श्रद्धा भक्ति के साथ शिवरात्री व्रत करेगा उनको तो कहना ही क्या है। जो नरनारी इसे पढ़ेगें, सुनेगें, दोनों लोक में सुखी होगें।

गुणनिधि का कुबेर होना

ब्रह्मा जी ने कहा हे नारद जी! अब गुणनिधि नामक व्यक्ति ने शिवरात्री व्रत करके जिस प्रकार आनन्द पाया है उसे सुनो—द्रुपदपुरी में गंगा जी के तट में कम्पिला नाम का अति पवित्र स्थान है। वहाँ शिव जी रामेश्वर के नाम से तथा शिवा काली के नाम से विराजते हैं। वहाँ यज्ञ करने वाला यज्ञदत्त नाम का ब्राह्मण रहता था। वह शिवजी का बड़ा भक्त था। राजा ने उसे बहुत धन दे रखा था। उसकी स्त्री भी बड़ी धर्मात्मा थी। उनका एक पुत्र हुआ जिसका नाम 'गुणनिधि' रखा गया था। यज्ञदत्त ने उसे धर्म तथा विद्या की शिक्षा दी और विवाह कर दिया। परन्तु थोड़े समय में ही गुणनिधि बुरी संगति में पड़ गया। और दुःष्ट हो गया। वेद तथा पुराणों के सब कर्म छोड़ दिया। जूवा खेलकर पिता की सारी सम्पत्ति नष्ट कर दिया। पर उसकी माता गुणनिधि के दोषों को छिपाये रखती, माता ने सरलता से उसे उपदेश देकर अच्छे काम में लगाना चाहा वह नहीं माना। वह बड़ा दूराचारी हुआ। अपनी स्त्री को छोड़कर पराई स्त्री के सेवन में रत रहता था। एक दिन यज्ञदत्त ने अपनी अङ्गुठी दूसरे के हाथों में देखकर उसे पूछा तो जुवारी ने कहा मैंने तेरे पुत्र से जूवा में जीता है। तुम्हारा पुत्र जुवाड़ी है। यह सुनकर यज्ञदत्त को बड़ा दुःख हुआ। घर में जाकर स्त्री से पूछा किन्तु पुत्रस्नेह वस स्त्री ने कुछ नहीं कहा। तब यज्ञदत्त ने कुशोदक लेकर संकल्प

पूर्वक अपने कुपुत्र को त्याग दिया। परन्तु स्त्री ने पति से बहुत अनुनय-विनय किया, पुत्र को फिर घर में रखना स्वीकार कराई। गुणनिधि ने यह बात सुना तो, रोता-चिल्लाता घर से भागा। वह चलते-चलते सूर्यास्त तक चला और बैठ गया। संयोग वस उसदिन शिवरात्री का दिन था।

यह व्रतों का शिरोमणि है। उस दिन शिवजी का एक भक्त शिवरात्रि व्रत धारण किये अनेक भक्तों को साथ लिये पूजन की सामग्री सहित उस रास्ते से निकला। गुणनिधि भूखा था। उन भक्तों के पास मधुर मिष्ठान्नों को देखकर उनका पीछा करता हुआ चुराने का प्रयास करने लगा। शिवजी के भक्त ने एक मन्दिर में जाकर षोडशोपकार से शिवजी की पूजा की। वह सव गुणनिधि छिपकर देख रहा था। पूजा के उपरान्त शिवजी के भक्तगण ऊँघा गये। उसने वस्त्र फाड़कर एक बत्ती बनाया और नैवेद्य को देखकर शिवजी का नैवेद्य चुराकर भागना चाहा, चलते वक्त किसी के पैर से धक्का लगने से उस व्यक्ति ने शोर मचाया—चोर है, नैवेद्य चुराकर भाग रहा है, उसे पकड़ो। यह सुनकर भक्तगण तुरन्त पहुँच गये और उन्होंने गुणनिधि को बाणों के प्रहार से मार डाला। गुणनिधि पूर्व जन्म के पूण्य से शिवनिर्माल्य खाने से बच गया। यमराज के गण उसी वक्त आ पहुँचे गुणनिधि को बाँधकर यमराज के पास ले जाना चाहते थे। शिवजी ने अपने गणों को आज्ञा दिया कि गुणनिधि को यमदूतों से छुड़ाकर मेरे पास ले आओ, क्योंकि उसने शिवरात्रि व्रत किया है, मेरी पूजा आँखों से देखी है, मेरा निर्माल्य खाने से वच गया। मैंने उसे अपना भक्त बना लिया है। अब वह नरक में नहीं जा सकता। यह व्रत मुझे अतिप्यारा है। जो शिवरात्रि के दिन मेरी पूजा देखता है, वह मुझे सबसे प्रिय है। उसने मुझे दोप दिखलाया है, अतः वह कलिंग देश का राजा होगा और फिर मेरे पास आयेगा। वह कुबेर होकर मेरा मुख्य मित्र होगा और आनन्द करेगा। शिवजी के गण यमदूतों के हाथ से गुणनिधि

T

को छीनकर शिवजी के पास ले गये। वह बाद में कलिंगनरेश होकर 'दम' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अनजाने में शिवरात्रि व्रत करने का फल यह है।

पुनः शिवरात्रि महात्म्य बताते हैं—प्राचीन काल में सौमणि नाम की एक ब्राह्मण की कन्या थी। उसके पिता ने एक ब्राह्मण कुमार के साथ विवाह कर दिया। दोनों ने नाना प्रकार के भोग भोगे, किन्तु उसका पति युवा अवस्था में ही मर गया। पति के मरने के बाद सौमणि कुछ समय तक रही, किन्तु बाद में कामवेदना के सताने से पुंश्चली हो गयी। जाति के लोगों ने उसे अलग कर दिया। वह स्त्री स्वतन्त्र होकर घूमने लगी। एक दिन एक शूद्र उसको अपनी स्त्री बनाकर अपने घर ले गया। सौमणि उसके साथ मांस और मदिरा खाने-पीने लगी। एक दिन उसने जहाँ बकरे तथा बछड़े बाँधे थे, वहाँ जाकर एक बछड़े को मारा। रात्रि होने के कारण उसने कुछ भी नहीं जान पाया। पीछे पछताने लगी और मुख से शिव-शिव कही। फिर क्षणभर बाद उस मांस को पकाकर खा लिया। उस स्त्री ने मरने के बाद कुछ दिन नरक में रहकर चाण्डाल के घर जन्म लिया। वह जन्म से ही अन्धी थी। माता-पिता भी मर गये। भाई-बन्धु न होने के कारण मारे-मारे फिरने लगी। कुष्ठ हो गया। कष्ट के साथ दिन काटने लगी। जब फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी (महाशिवरात्रि) को गोकर्ण क्षेत्र में मेला लगा। शिवजी का दर्शन करने लोग जाने लगे तो वह भी उनके पीछे-पीछे मांगती खाती वहाँ पहुँच गयी। वहाँ दोनों हाथ फैलाकर भीख मांगने लगी। एक शिवभक्त ने एक मुट्ठा बिल्वपत्र उस अन्धी स्त्री के हाथों में फेंक दिया। उस अन्धी ने यह खाने योग्य नहीं है, समझकर फेंक दिया। संयोगवश वह बिल्वपत्र शिवलिंग के ऊपर जा गिरा। उस दिन शिवरात्रि थी। शिवजी ने जाना कि उस अन्धी ने मेरी पूजा की है। वह रातभर भीख मांगती रही। किसी ने कुछ नहीं दिया, अतः उसने निर्जला व्रत कर लिया और जागरण भी। वह स्त्री फिर अपने देश लौटी और मर गयी। शिवजी ने उसे लाने के

लिए अपने गणों को विमान लेकर भेजा। शिवजी के गणों ने विमान पर चढ़ाकर उसे शिवजी के पास पहुँचाया। वह पार्वतीजी की सखी हो गयी। शिवरात्रि व्रत महान् फल देने वाला है। कार्यों को सिद्ध करने वाला है। इस व्रत के करने से मित्रसहराजा की ब्रह्महत्या छूट गयी। इसके महात्म्य श्रवण से और कथन से सब पापों से मुक्ति मिलती है। शिवरात्रि व्रत की महिमा मुक्ति प्रदान करने वाली है। फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी को रात्रि में जागरण, शिवजी का दर्शन, पूजन तथा विल्व पत्र समर्पण अत्यधिक फलदायक होता है। दस हजार वर्ष गंगास्नान के बरावर शिवरात्रि व्रत का फल हैं। संसार में जितने पवित्र दिन हैं, वे सब शिवरात्रि व्रत में स्थित हैं। सौ यज्ञ के समान शिवरात्रि व्रत है। व्रत के साथ जागरण करने से व्रत पूर्ण फल देता है। जो मनुष्य एक भी वेलपत्र से शिवजी की पूजा करता है, उसके समान मुक्ति देनेवाला दूसरा कोई कर्म नहीं है।

इसपर एक इतिहास कहते हैं। एक वेलपत्र शिवजी को चढ़ाने से सब पाप दूर होते हैं। 'मित्रसह' नाम का वड़ा धर्मात्मा एक राजा था। उसकी स्त्री मदयन्ती राजा नल की स्त्री दमयन्ती के समान पतिव्रता थी। एक दिन राजा सेना को साथ लेकर शिकार खेलने के लिए वन में गया। उसने वहुत से जीवों को मारा। राजा बहुत दिन तक वन में रहा और कमठ नामक राक्षस को मारा। उस राक्षस के भाई को बड़ा दु:ख हुआ। वह भाई का बदला लेने के लिए मनुष्य का रूप धारण कर उसी राजा का सेवक बन गया। राजा घर लौटा तो अपने गुरुजी को निमन्त्रण दिया। उस राक्षस के भाई मे भोजन में नरमांस को छिपाकर मिला दिया। गुरुजी ने जान लिया और राजा को शाप दिया—तुम बारह वर्ष तक के लिए राक्षस हो जाओगे। राजा ने भी शाप देना चाहा, परन्तु रानी ने उसे रोक दिया। शाप का जल अपने पैर पर छोड़ा था, अतः उस राजा को कल्माषपाद कहने लगे। वह राजा राक्षस होकर बहुत से जीवों को खाने लगा। एक दिन उसने एक नवयुवक ब्राह्मण को मारा,

T

जो अपनी स्त्री के साथ भोग रहा था। उसकी ब्राह्मणी ने भी शाप दिया कि तुम भी अपनी स्त्री के साथ भोग करेगा तो मर जायेगा। ब्राह्मणी सती होकर परलोक सिधारी। बारह वर्ष के बाद वह राजा घर गया। उसकी स्त्री ने प्रसंग करने से रोका। वह घर छोड़कर तीर्थयात्रा के लिए चला गया। जनकपुर में गौतम मुनि से भेंट करके कहा—मुझे ब्राह्मण का शाप लगा है, कैसे छूटेगा? तब मुनि ने कहा—तुम शिवजी की उपासना करो। जहाँ गोकर्ण क्षेत्र में 'महाबल' नाम का शिवलिंग है, उसका पूजन करो। शिवरात्रि व्रत करो। राजा मित्रसह ने वैसा ही किया। शिवरात्रि व्रत के प्रभाव से राजा ने सब प्रकार के सुख भोगे। अन्त में शिवजी का गण हो गया। इस चरित्र को प्रतिदिन सुने और सुनावे तो उसकी २१ पीढ़ी तर जाती है। यह इतिहास परम पवित्र है।

और भी शिवरात्रि व्रत का महात्म्य कहते हैं—यह व्रत अनजान में हो जाय तो भी उत्तम फल देता है। प्राचीन काल में किरात देश में विकर्ष नाम का एक राजा था। वह कुकर्मी था, परन्तु शिवरात्रि का व्रत करता था। उस दिन बड़ा उत्सव करता था। दान भी देता था। उसकी रानी का नाम कुमुद्वती था, वह बड़ी सुशीला थी। उसने अपने पति से पूछा—तुम कुकर्मी, दुराचारी, परस्त्रीगामी, सर्वभक्षी होते हुए भी कैसे शिवभक्ति में मन लगाते हो, मुझे तो बड़ा आश्चर्य होता है? तुमने यह कहाँ से सीखा है, मुझे बताओ। राजा ने हँसते हुए कहा—मैं पूर्वजन्म में कुत्ता था। पम्पापुर में घूमा करता था। भूख और प्यास से दौड़ते-दौड़ते थक गया था। एक दिन शिवजी के भक्तों ने शिवजी की पूजा की। मैं भोजन की इच्छा से खड़ा होकर देखने लगा। उन्होंने मुझे मारकर भगाया, परन्तु मैं घूमकर आ गया। तब एक व्यक्ति ने तीर से मारा, मैं मर गया। शिवजी को देखते हुए मैं मरा, इसलिए राजा के घर पैदा हुआ। मैंने चतुर्दशी को शिवजी की पूजा तथा दीपदान देखा था। इस कारण मैं तीनों काल की बातों को जानता हूँ। मैं सर्वभक्षी हूँ, यह पूर्वजन्म का संस्कार है। इसे मिटाना बड़ा कठिन है। मैं शिवजी की

पूजा करता हूँ, अतः मेरे कर्म शुभ होते हैं। हे रानी ! तुम भी शिवजी की पूजा करो। यह सुनकर रानी को शिवजी के पूजा में बड़ी श्रद्धा हुई। उसकी रानी ने कहा—हे पतिदेव ! मैं भी पूर्वजन्म की बात जानना चाहती हूँ, कृपा करके बता देवें।

यह सुनकर राजा ने रानी से कहाँ तुम पूर्व जन्म में कबुतरी थी एक दिन तुमने मांस का टुकड़ा पाया उसे लेकर आकश में उड़ी, एक गिद्ध ने देखा और पीछे से झपटा उसके मार से तुम एक शिवालय के शिखर में गिरकर मर गयी। मरते समय में शिवजी का लिङ्ग देखा था, इसी पुण्य से तुम इस जन्म में मेरी रानी हुई। यह सुनकर शिवजी की भक्ति बढ़ी और रानी ने कहा राजन् तुम अपना और मेरा भविष्य भी बताओ। राजा बोला कि हम दोनों का भविष्य सुनो। हम दूसरे जन्म में सिन्धु देश के राजा होगें। तुम राजा संजय की पुत्री होगी, फिर मेरे साथ विवाह होगा। तीसरे जन्म में हम सौराष्ट्र राजा के पुत्र होंगे तुम कलिङ्ग देश के राजा की पुत्री होगी मेरे साथ विवाह होगा। चौथे जन्म में हम गान्धार देश के राजा होंगे। तुम मगध देश के राजा की पुत्री होगी तुमसे मेरा विवाह होगा। पाँचवे जन्म में हम उज्जयन के राजा होंगे तुम राजा दशारण्य की पुत्री होगी पुनः तुमसे हम विवाह करेगें। छठे जन्म में हम आनर्त देश के राजा होंगे तुम ययाति के कुल में जन्म लोगी, हम तुमसे विवाह करेगें। सातवें जन्म में हम पाण्डय देश के राजा पद्मवर्ण होंगे, तुम राजा विदर्भ के घर जन्म लेकर सुमती नाम से प्रसिद्ध होगी। तब तुमको स्वयंवर में जीतकर तुमसे हम विवाह करेंगे। इस प्रकार हम दोनों शिवजी की पूजा में लगे रहेंगे। भोगविलास से युक्त, सन्तान से सम्पन्न होंगे, फिर पुत्र को राज देकर वनमें जाकर अगस्त्य मुनि से ज्ञान प्राप्त करके शिव लोक में जाँयेंगे। शिव के गणों में गिने जायेंगे। बहुत काल तक शिवजी का व्रत करके समय बिता कर सातवें जन्म में मुक्ति पायेंगे।

T

अथ प्रदोष व्रत महात्म्य

प्रदोष व्रत शिवजी को अति प्रिय है। वे स्त्री-पुरुष धन्य हैं, जो इस व्रत को करते हैं। दोनों पक्ष की त्रयोदशी को निर्जला व्रत करे। स्नानादि से निवृत्त होकर शिव की पूजा करे। उस समय कोई संसार का कार्य न करे। जब तीन घड़ी दिन रहे तब शक्ति के अनुसार स्नान कर मौन होकर सन्ध्या करके शिवजी का ध्यान करके, शिवजी का पूर्ण पूजा करे, प्रदोष काल में शिव पूजा करके ब्राह्मणों को भोजन दे। दान-दक्षिणा भी दे; आज्ञा लेकर स्वयं हविष्यान्न (खीर) का भोजन करे। यह शिवजी की पूजा सब पापों का नाश करने वाली है। प्रदोष में शिवजी की पूजा करने से ब्रह्महत्यादि का पाप भी नष्ट हो जाता है जो प्रदोष व्रत करके भोजन करते हैं वे दोनों लोकों में आनन्द का भोग करते हैं। उनपर आपत्ति कभी नहीं आती। इसपर एक विचित्र कथा का वर्णन है जिससे शिवजी की भक्ति वढ़ती है। प्राचीन काल में उज्जयिनी का राजा चन्द्रसेन शिवजी का वड़ा भक्त हुआ। प्रेम से प्रदोष व्रत का उत्सव करता था। महाकाल शिवलिङ्ग का पूजन करता था। एक दिन 'मणिभद्र' नाम के शिवजी के गण ने प्रसन्न होकर एक चिन्तामणि दिया उस मणि में यह गुण था कि जो उसे देखें उसको पास रखे या स्पर्श करे या स्मरण करे तो वह मनुष्य आपदाओं से मुक्त हो प्रसन्न होता था। उसके स्पर्श से सब धातु सोना होते थे। उस रत्न के धारण से राजा सूर्य के समान तेजस्वी हुआ। सारी पृथ्वी के राजाओं को यह बात ज्ञात हुई और राजाओं ने उससे माँगा, पर उसने किसी को नहीं दिया। तव सभी राजाओं ने उसपर चढ़ाई कर दिया। उसकी राजधानी उज्जयिनी को चारों ओर से घेर लिया रात्रीभर राजधानी में शोक छाया था। सबेरे प्रदोष का व्रत था राजा ने महाकालेश्वर शिव का पूजन किया उसी समय एक स्त्री

पाँच वर्ष का लड़का गोद में लेकर वहाँ पर आयी। राजा का शिवपूजन देखकर जब वह स्त्री घर गयी तो उसके बालक को शिवजी के प्रति इतना अधिक प्रेम हुआ कि उसने भी एक शिला स्थापित करके जिस प्रकार राजा को पूजन करते देखा था उसी प्रकार वह बालक भी शिवजी की पूजा करने लगा। उसकी माँ ने भोजन करने के लिए बुलाया पर वह पूजा छोड़कर नहीं आया। तब उसकी माँ क्रोधकर लड़के का हाथ पकड़ कर घर की ओर खींचने लगी शिवलिङ्ग को दूर फेंक दिया। बालक हाय-हाय करके रोने लगा और मूर्छित हो गया। बालक ने उस मूर्छित अवस्था में एक रत्न का शिवलिंग देखा। शिवजी की महिमा जानकर उसने बहुत स्तुति की—हे प्रभो! मेरी माँ मूर्खा है, उसका अपराध क्षमा करें। ऐसा कहकर वह बालक घर गया तो देखा कि इन्द्रलोक के समान वह नगर हो गया था। वहाँ का मन्दिर मनोहर रत्नों से जड़ा था। उन सब मन्दिरों में उसकी माँ का मन्दिर सबसे सुन्दर था। उसके भीतर रत्नों की शय्या पर उसकी माँ सो रही थी। उसने माँ को जगाया। माँ ने यह चित्र-विचित्र मन्दिर देखा और बड़ी प्रसन्न हुई। बालक ने कहा—यह सब शिवजी की कृपा से प्राप्त हुआ है। राजा ने यह वृत्तान्त सुना, पूजा पूर्ण करके उस मन्दिर को देखने गया। देखकर परम प्रसन्न हुआ। राजा की उस बालक से मित्रता हुई। उसकी प्रशंसा की और सब राजाओं ने विरोध त्याग कर शिवजी की पूजा की। शिवजी की कृपा देखकर राजा से मित्रता की और अपने नगर को लौट गये। लौटते वक्त उस लड़के का दर्शन तथा मन्दिरों का दर्शन कर राजाओं ने बहुत सा भेंट दिया। स्वयम्भू लिंग का दर्शन दुर्लभ था। बालक को गोपों का राजा बनाया गया। उस वक्त श्री हनुमानजी ने भी सबको दर्शन दिया और उस बालक को गोद में उठा लिया, शरीर में हाथ फेरा। चन्द्रसेन को अभय वर दिया। प्रदोष व्रत के महात्म्य प्रकट करने के लिए शिवजी ने यह लीला की थी।

(बालक ने कृष्णपक्ष के चतुर्दशी शनिवार को शिवजी की पूजा की थी, अतः वह ऐसे पद पर पहुँचेगा, जो आठवें जन्म में नन्द नाम का

T

गोपों का राजा होगा। उसके घर विष्णु भगवान् का अवतार होगा)। आज से इस बालक का नाम 'श्रीकर' होगा। शिवजी के पूजा में भस्म, रुद्राक्ष आदि अवश्य लगाना चाहिये। प्रदोष काल में शिवजी की पूजा करना चाहिये। जो लोग प्रदोष काल में शिवजी की पूजा नहीं करते, वे लाग दरिद्र होते हैं। प्रदोष काल में शिवजी की पूजा छोड़कर और कुछ भी न करे। प्रदोष व्रत प्रारम्भ करके पूरा किये बिना वीच में न छोड़े। छोड़ने से विपत्तियाँ आती हैं। उदाहरण के लिये—

विदर्भ देश में 'सत्यरथ' नाम का एक राजा था। उसने प्रदोष व्रत को छोड़कर शत्रु को मारा और उस दिन भोजन भी कर लिया। इस कारण उसको अन्य शत्रुओं ने आक्रमण करके मार डाला। उसकी रानी जंगल में भाग गयी। वह गर्भिणी थी, किसी तरह रात्रिभर भागकर एक तालाव के पास वैठ गयी। वहाँ शुभ लग्न में एक पुत्र को जन्म दिया। वह प्यास से व्याकुल होकर नदी के तट पर पानी पीने गयी, इतने में ही उसको मगर निगल गया। उसका नवजात शिशु रो रहा था। क्षुधा से व्याकुल था। उसकी दशा देखकर शिवजी को दया आयी। शिवजी की कृपा से वहाँ पर एक विधवा ब्राह्मणी आयी और बालक को अकेले देखकर चकित हुई। यह किसका वालक है, मैं नहीं जानती। तब शिवजीं भिक्षुक का वेश धारण कर वहाँ आये और उस स्त्री से बोले– तुम संशय छोड़कर इस लड़के का पालन-पोषण करो, इससे तुम्हें वड़ा सुख मिलेगा। यह पूर्वजन्म में राजपुत्र था। त्रयोदशी व्रत के दिन शिवजी की पूजा छोड़कर शत्रु का नाश किया। उसी अशुद्धता में भोजन किया था। इसी कारण इस प्रकार कष्ट पाया है। इसकी माँ ने अपने सौत को धोखे से मारा था, इसलिए उसे मगर ने खाया। तुम इस बच्चे को पालो। शिवरात्रि को शिवजी की पूजा करो या कराओ। इससे सब प्रकार के सुख; सम्पत्ति और आनन्द मिलेगा। अन्त में मुक्ति मिलेगी। ऐसा कहकर शिवजी अन्तर्धान हो गये। उस स्त्री ने वैसा ही किया।

(शिवपुराण)

T

रुद्राक्ष का महत्त्व तथा धारण का फल

ब्रह्माजी कहते हैं—हे नारद ! मैं तुमको रुद्राक्ष की महिमा सुनाता हूँ, जिसका बर्णन करने में देवता और ऋषि-मुनियों की जिह्वा थक जाती है। शिवजी को रुद्राक्ष अतिप्रिय है। रुद्राक्ष के दर्शन, जप तथा पूजन से सब प्रकार के पापों का नाश हो जाता है। एक समय सदाशिव ने संसार के कल्याण के लिए आँख वन्द करके दिव्यसहस्र वर्ष तप किया। जब उन्होंने आँख खोला तो दो जलविन्दु उनके नेत्रों से पृथ्वी में गिरे, उसी बिन्दु से दो रुद्राक्ष के वृक्ष उत्पन्न हो गये। शिवजी की कृपा से भक्तों को मिले। ये रुद्राक्ष भारतवर्ष के हर एक प्रान्त में उत्पन्न होने लगे। अयोध्या, मथुरा, काशी, गौड़ तथा सह्यगिरि में अधिक पैदा हुए। इनके दर्शन से सब पापों का नाश होता है। सुख-शान्ति मिलती है। रुद्राक्ष चार रंग के होते हैं श्वेत, लाल, पीला और श्याम। चारो वर्णों के लोग क्रमशः इनको धारण करें तो उत्तम है। रुद्राक्ष धारण करने वालों को मद्य, मांस, लहसुन, प्याज इत्यादि का सेवन नहीं करना चाहिये। जो व्यक्ति मुक्ति और भुक्ति चाहते हैं, उनको उचित है कि पवित्रता के साथ रुद्राक्ष धारण करे। सभी भक्तगण, देवगण, मानवगण रुद्राक्ष को धारण करके वड़ा सुख पाते हैं। रुद्राक्ष धारण से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। रुद्राक्ष की माला सब मालाओं में श्रेष्ठ है। इसके धारण करने से मनुष्य को काल का भय नहीं होता। रुद्राक्ष सब देवताओं को प्रिय है। शंकरजी को तो अत्यन्त ही प्रिय है। ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रादि देवगण रुद्राक्ष को धारण करते हैं। आँवले के समान रुद्राक्ष सभी मनोरथों को पूर्ण करगे वाले हैं। सभी रुद्राक्ष श्रेष्ठ हैं, गुञ्जा के समान रुद्राक्ष सभी मनोरथों को पूर्ण करते हैं। जितने अधिक छोटे रुद्राक्ष होते हैं, उतने ही अधिक श्रेष्ठ हैं। धारण करने पर अधिक फल देते हैं।

T

जो रुद्राक्ष पुष्ट तथा मजबूत हों, चिकने हों, काँटेदार हों और मोटे हों, वे सब प्रकार के मनोरथों को देने वाले हैं। भक्तजनों के सब प्रकार के पापों को नष्ट करने वाले हैं, जिसको कीड़ों ने खाया है। जिसमें काँटे नहीं हैं, छिद्रयुक्त हैं, फुटे-टूटे हैं, वे सब त्याज्य हैं। जो रुद्राक्ष शिवभक्तों का लाया हुआ हो, वही उत्तम है। अन्य लोगों का लाया हुआ मध्यम है। ब्रह्माजी ने कहा—जिस रुद्राक्ष को मैंने सर्वोपरि कहा है, उसे धारण करना चाहिये। उसको धारण करने वाले मनुष्य को शिव का स्वरूप समझना चाहिये। भक्तों को चाहिये कि आलस्य छोड़कर मन्त्रोच्चारणपूर्वक रुद्राक्ष धारण करे। जो जान-बूझकर बिना मन्त्रोच्चारण किये रुद्राक्ष धारण करता है, उसे सुख नहीं मिलेगा, दोष लगेगा। अज्ञानी हो तो कोई बात नहीं। भूत-प्रेत की बाधाएँ भी रुद्राक्ष धारण से मिट जाती हैं। अभिचार (जादू-टोना) भी रुद्राक्ष धारण से दुर हो जाते हैं। रुद्राक्ष को देखकर देवगण भी प्रसन्न रहते हैं। शिवजी तो रुद्राक्षधारी मनुष्य को देखकर परम प्रसन्न होकर हँसने लगते हैं। अनाचारी, पापाचारी, दूराचारी, कुकर्मी मनुष्य भी कुकर्म छोड़कर श्रद्धा से रुद्राक्ष धारण करे तो सब पापों से छूटकर परमपदलाभ करता है। रुद्राक्ष की माला से मन्त्रजप करे तो कोटिगुणा अधिक फल होता है। रुद्राक्षधारी मनुष्य की अकाल मृत्यु नहीं होती और मरण काल में शिवजी का ज्ञान प्राप्त होता है। श्रद्धापूर्वक रुद्राक्ष धारण करने से निश्चित ही मुक्ति होती है। जिस मनुष्य के शरीर में रुद्राक्ष और भस्म का त्रिपुण्ड्र हो मृत्युञ्जय मन्त्र का जप करता हो, ऐसे मनुष्य को देखने से शिवजी के दर्शन का फल होता है। सभी वर्णाश्रम के लोग रुद्राक्ष धारण कर सकते हैं। शूद्र भी श्रद्धा-विश्वासपूर्वक रुद्राक्ष धारण करे तो फल प्राप्त होगा। दिन में रुद्राक्ष धारण करने से रात के सब पाप नष्ट होते हैं तथा रात में धारण करने से दिन के सब पाप नष्ट होते हैं। जो मनुष्य त्रिपुण्ड्रधारी, रुद्राक्षधारी तथा जटाधारी है, वह नरक में नहीं जाता। ललाट में त्रिपुण्ड्र, गले में एक रुद्राक्ष और मुख में मन्त्राक्षर मन्त्र है, वह सभी

लोकों में पूज्य है। जो ऐसे वेश में है, वह कभी नरकगामी नहीं होता। जो स्त्री या पुरुष ऐसा वेश धारण करते हैं, वे शिवजी के प्यारे हैं। चाहे वे पापी क्यों न हों, वे परम पवित्र हैं।

रुद्राक्ष अनेक प्रकार के होते हैं। उनके गुण सुनने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

विविध मुखों के रुद्राक्ष का महत्त्व

(१) एकमुखी रुद्राक्ष - शिवजी का स्वरूप ही है। उसके धारण करने से भक्ति और मुक्ति दोनों ही मिल जाते । दर्शन से ब्रह्महत्या आदि पाप दूर होते हैं, सब उपद्रव शान्त होते हैं, सब मनोरथ पूर्ण होते हैं। जिसने एक मुखी रुद्राक्ष पाया, वह बड़ा भाग्यशाली है। वह पवित्र तथा पापरहित है। (२) दो मुखी रुद्राक्ष —गौरीशंकर का प्रतीक है। इसके धारण से सब मनोरथ पूर्ण होते हैं तथा गोवध का पाप तत्काल छूट जाता है। घर में सब प्रकार के सुख-साधन उपलब्ध होते हैं। ' ३) तीन मुखी रुद्राक्ष—अग्नि का प्रतीक है। इसके धारण करने से स्त्री वध का पाप कट जाता है, विद्या तथा धन की प्राप्ति होती है। तीन दिन में आने वाला ज्वर नष्ट हो जाता है। (४) चार मुखी रुद्राक्ष—यह ब्रह्मा का स्वरूप है। इसके धारण से बड़ा आनन्द मिलता है और नर वध का पाप नष्ट हो जाता है। इसके दर्शन-स्पर्श से चारों पुरुषार्थ सुलभ हो जाते हैं। (५) पाँच मुखी रुद्राक्ष—शिव का स्वरूप है। इसके धारण करने से भुक्ति और मुक्ति दोनों ही मिल जाते हैं। सब प्रकार के पाप नष्ट हो जाते हैं। भोग और मोक्ष दोनों ही सुलभ हो जाते हैं। (६) छः मुखी रुद्राक्ष—स्कन्द (षडानन) का प्रतीक है। इसे दाहिनी भुजा में धारण करने से ब्रह्महत्या भी छूट जाता है। सुख, शान्ति और सन्तान की वर्षा करता है। (७) सात मुखी रुद्राक्ष—महासेन या अनन्त का प्रतीक है। इसके धारण करने से निर्धन धनी, निर्बल वली तथा राजा के तुल्य होता है। सब पापों से छूट जाता है। (८) आठ मुखी रुद्राक्ष—बटुक भैरव

T

का प्रतीक है। इसके धारण करने ने आयु बढ़ती है और अन्त में शिवजी मुक्ति प्रदान करते हैं। (९) नौ मुखी रुद्राक्ष—भगवती दुर्गा का प्रतीक है। इसे दाहिनी भुजा में धारण करने से ब्रह्मा के समान सबका स्वामी होकर शक्तिवान होता है और सब पापों से शुद्ध हो जाता है। (१०) दस मुखी रुद्राक्ष— जनार्दन का प्रतीक है। इसके धारण से सब कामनाएँ पूर्ण होती हैं। कहीं किसी से नहीं मारे जाते। (११) ग्यारह मुखी रुद्राक्ष—एकादश रुद्र का प्रतीक है। इसके धारण करने से सर्वत्र विजयी होता है। (१२) बारह मुखी रुवाक्ष—सूर्य का प्रतीक है। इसे शिखा में धारण करने से सब प्रकार के रोग दूर होते हैं। दोनों लोकों में सुख मिलता है। (१३) तेरह मुखी रुद्राक्ष—विश्वेदेव का प्रतीक है। इसके धारण करने से सब कार्य की सिद्धि होती है। (१४) चौदह मुखी रुद्राक्ष—इसको ललाट में धारण करने से किसी प्रकार का कष्ठ नहीं हो सकता और सब पापों से छूट जाता है।

सभी प्रकार के रुद्राक्ष की महिमा अनन्त है। माला बनाकर धारण करे तो मोक्ष भी मिलता है। सौ दाने की रुद्राक्ष की माला बनाकर धारण करे तो मोक्ष अवश्य मिलेगा। १४० दाने की माला आरोग्य प्रदान करती है। ३२ दाने की माला से धन की प्राप्ति होती है। १५ दाने की माला अभिचार के काम में आती है। १०८ दाने की माला सब कार्यों को सिद्ध करती है। अन्य प्रकार की माला भी एक-एक कार्य को सिद्ध करती हैं। जैसे पुत्रजीवा की माला पुत्रप्रद, मणि की माला धनप्रद, मोती की माला भाग्य को बढ़ाती है। कुश की माला पापनाशक, सोने-चाँदी की माला सुन्दर मनोरथों को पूर्ण करने वाली है। स्फटिक की माला सुन्दर गति तथा धन, पुत्र, मान-सम्मान, सुख-शान्ति एवं वशीकरण की प्राप्ति कराती है। (स्फटिक के शिवलिंग का पूजन करने से मोक्ष तथा धनादि वैभव की प्राप्ति कराता है।), परन्तु रुद्राक्ष की माला अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष चारों पदार्थों की प्राप्ति कराती है। रुद्राक्ष की एक दाने की माला का जप अन्य

मालाओं से करोड़ गुना अधिक फल प्रदान करती है। रुद्राक्ष की महिमा स्वयं शारदा भी वर्णन नहीं कर सकतीं।

प्रत्येक अंगों में रुद्राक्ष धारण करने की विधि—११ सौ रुद्राक्ष, एक हजार रुद्राक्ष, चार सौ रुद्राक्ष धारण का विधान है। ग्यारह सौ रुद्राक्ष धारण की विधि—५५० रुद्राक्ष का मुकुट, ३०० का जनेऊ तीन लड़ी का बनावे। १०१ रुद्राक्ष गर्दन में, ३ रुद्राक्ष शिखा में, यज्ञोपवीत में ३०, दाहिने कान में ५. बायें में ६, इसी प्रकार भुजाओं में और हाथों में बाँधे, शेष बचे तो कटि में बाँधे। इस प्रकार रुद्राक्ष धारण करने वाले पुरुष दोनों लोकों में पवित्र, पापरहित तथा शिवजी के समान वन्दनीय होतें हैं। उनके दर्शन से सब प्रकार के रोग दूर होते हैं। इतने रुद्राक्ष धारण करके शिव का ध्यान करे और शिव-शिव रटे। जो पुरुष ऐसा करता है, उसको देखकर दर्शक का भी पाप नष्ट हो जाता है। अब १००० रुद्राक्ष धारण करने का विधि— ३०० का मुकुट, ५०० कन्धे में, १०८ जनेऊ में, ३२ भुजाओं में, १६ हाथों में और शेष बचे तो कण्ठी बना ले। इस प्रकार धारण करने से समस्त पापों का नाश होता है, वह अपने कुल सहित परम पद को जाता है।

रुद्राक्ष धारण करने की अन्य विधियाँ—सिर में १, ललाट में ४०, छाती मे १०८, गले में ३२, दोनों कानों में ६-६, दोनों भुजाओं में २२, दोनों हाथों में २४ इस तरह से रुद्राक्ष धारण करने वाला शिव के समान होता है। इतने रुद्राक्ष पहिनकर शिवजी की पूजा करे तो कोई संकट नहीं होगा। एक रुद्राक्ष धारण कर सिर से स्नान करे तो गंगास्नान का फल होता है। जो पुरुष रुद्राक्ष धारण करके मरता है, वह शिव का साक्षात्कार करता है। जो नित्य रुद्राक्ष की पूजा करता है, वह राजा के समान धनी होता है।

रुद्राक्ष धारण का प्रभाव—देवीदत्त कुआँ के निकट पूजा करता था, उसमें एक तेली मरकर बेताल हो गया था। उसने पहचान लिया और

उससे पूछा—तुम कौन हो, क्या करते हो ? तब उसने कहा— मैं मरकर यमदूत हो गया हूँ। इस कुआँ में एक वैश्य आयेगा, बैल के द्वारा मारा जायेगा, मैं उसे यमलोक ले जाऊँगा। थोड़े ही देर में एक वैश्य आया। बैल ने मार डाला। रुद्राक्ष धारण के कारण शिवजी के दूत कैलाश में ले गये। यम के दूतों को नहीं मिला।

इसी प्रकार एक वेश्या थी वह एक कुत्ता तथा एक बन्दर को पाल रखी थी। कुत्ता तथा वन्दर को नचाती थी। उनके गले में रुद्राक्ष पहना रखी थी। एक दिन उसके घर में आग लग गयी तब उसने कुत्ते और बन्दर को रस्सी खोल कर भगा दिया। वे दोनों अथाह बन में भटकते हुए मर गये। रुद्राक्ष धारण के प्रभाव से मरने के वाद दूसरे जन्म में वन्दर राजकुमार तथा कुत्त मन्त्री का लड़का हुआ। वे दोनों जातिस्मर हुए। (पूर्व जन्म की बात जाननेवाले)। वे मोतियों की मालाओं को त्याग कर श्रद्धा के साथ रुद्राक्ष की माला धारण करते थे। कुछ दिन बाद एक महात्मा राजा के पास आये। उनके पिता ने इन दोनों के रुद्राक्ष धारण करने का कारण पूछा। महात्मा ने उनके पूर्व जन्म की बात जानकर राजा से सब हाल कहा। और वताया कि वे दोनों पुर्नजन्म में शिव के गण हो जायेंगे यह रुद्राक्ष धारण की महिमा है।

(शिवपुराण)

रुद्राक्ष धारण की विधि—

रुद्राक्ष की माला गूँथ कर तैयार करके पञ्चामृत तथा पञ्चगव्य मिला कर माला को स्नान करावे, प्रतिष्ठा के समय 'नमःशिवाय' यह पञ्चाक्षर मन्त्र को पढे। पुनः माला को सुगन्धित जल से धोवे पञ्चगव्य से स्नान करावे फिर गंगाजल से शुद्ध स्नान करावे। मूल मन्त्र का न्यास करे। फिर शुद्ध भूमि में रखकर मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए चन्दन, फूल, चावल, धूपदीप आदि से माला की पूजा करें। त्र्यम्बकादि मन्त्रों से प्रतिष्ठा करे या अघोर मन्त्र से करे 'मन्त्र—ॐ अघोर ॐ ह्रीं

अघोरतरः ओं ह्रौं ह्रां नमस्ते रुद्र रूप ह्रौं स्वाहा। अनेन अभिमन्त्र्य धारयेत्। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके धारण करे।

बिल्वपत्र तथा शिवलिङ्ग की महिमा—

शिवजी साकार तथा निराकार दोनों हैं। अतः लिङ्ग निराकार का प्रतीक है और मूर्ति साकार का। लिङ्ग पूजा का महत्त्व अधिक है। लिङ्ग पूजा से—अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष चारो मिलते हैं, हजारों जन्मों के पुण्य से ही लिङ्ग पूजा में श्रद्धा होती है। ब्राह्मण को पारे का लिङ्ग, क्षत्री को नर्मदेश्वर, सुवर्ण का लिङ्ग वैश्य को और शिला लिङ्ग शूद्र को अपनी-अपनी इच्छा पूर्ण करता है। कलियुग में मिट्टी का लिङ्ग विहित है। त्रिकाल में नियम से पर्थिवलिङ्ग का पूजन करे तो शिव सायुज्य मिलेगा। जो शिवालिङ्ग पूजा नहीं करता वह पशु है। स्त्रियों को भी लिङ्ग पूजा करना आवश्यक है। छिद्र रहित बिल्वपत्र से शिवजी की पूजा करे। पञ्चाक्षर ॐनमःशिवाय से विल्वपत्र चढ़ावे, अमावश्या रिक्ता, संक्रान्ति अष्टमी, शिवरात्री तथा सोमवार को विल्वपत्र नहीं तोड़ना चाहिये और विल्वपत्र के बिना शिव जी की पूजा नहीं करना चाहिये।

भस्म धारण की महिमा—

भस्म (विभूति) दो प्रकार की होती हैं—महाभस्म तथा अल्पभस्म। महाभस्म शिवजी का मुख्य स्वरूप है। स्वल्प भस्म दो प्रकार के हैं। जैसे—वेद रीति से धारण करे वह श्रौत, पुराणों की रीति से धारण करे तो स्मार्त। संसारी अग्नि से निर्मित विभूति लौकिक है। ब्राह्मणों को वेद पुराणों द्वारा निर्मित विभूति धारण करना चाहिये। लौकिक रीति से निर्मित विभूति को अन्य लोग धारण करें। ब्राह्मणों को वेद मन्त्र द्वारा विभूति धारण करना चाहिये। अन्य लोग शिव जी का नामोच्चारण करते हुए धारण करें। ब्राह्मण को यज्ञ भस्म अवश्य धारण करना चाहिये। अन्य लोग गोमूत्र से सिञ्चित विभूति धारण करें। भस्म निर्माण करके जल से सींचकर धारण करे। ब्रह्मा, विष्णु, शिव जी भी त्रिपुण्ड

धारण करते हैं। पार्वती, लक्ष्मी तथा सरस्वती भी विभूति धारण करती हैं। योगी तथा सिद्ध लोग जो विभूति नहीं लगाते वे मुक्ति नहीं पाते। भस्म या त्रिपुण्ड रहित प्राणी पापी हैं। पापियों को भस्म प्रिय नहीं होता वे नारकी होते हैं। जो मनुष्य प्रेम से विभूति लगाते हैं उसे कोई कष्ट नहीं होता, उनके पाप जलकर भस्म हो जाते हैं। विना भस्म लगाये द्विजों को वेदमन्त्र का उच्चारण नहीं करना चाहिये। तथा मन्त्रों का जप भी नहीं करना चाहिये। भस्म का महात्म्य अनन्त है। उसका कोई वर्णन नहीं कर सकता। सभी को भस्म धारण करना चाहिये। वह तीर्थ के समान पवित्र हैं। जप, तप, व्रतों का फल भस्म धारण से ही पूर्ण होते हैं। भस्मधारी की निन्दा करनेवाले उसे डराने वाले तथा मारने वाले का जन्म व्यर्थ है, वह चाण्डाल है। जितनी भस्म की कणिका जिसके अंग में होगी, उतने ही शिवलिङ्ग जाननी चाहिये। स्त्री, पुरुष, बालक, जवान, वृद्ध सब भस्म धारण कर सकते हैं। कुंकुम (केसर के) ऊपर भी विभूति लगाना चाहिये। जो पुरुष नित्य शिव-पार्वती का ध्यान करता है। तथा भस्म धारण करता है, उनके जीवहत्या आदि समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। जो विभूति तथा त्रिपुण्ड की निन्दा करता है वह शिव का द्रोही है। विना भस्म लगाये जल भी नहीं पीना चाहिये। भस्मत्याग के कारण वह नरक में जाकर रक्तपान का कष्ट भोगता है। बिना भस्म के ललाट को धिक्कार है, जिस गाँव में शिव मन्दिर नहीं है उसे धिक्कार है। शिवजी की पूजा न करने वालों को धिक्कार है। विभूति लगाये विना पञ्चाक्षरी मन्त्र तथा तन्त्र विद्या या मन्त्र के अधिकारी नहीं होते। विष्णु आदि सब देवताओं की पूजा में विभूति लगाना चाहिये। भस्मधारी पुरुष के देह में गंगा आदि सब तीर्थ तथा क्षेत्र का निवास होता है। पञ्चाक्षर आदि सभी मन्त्र भी निवास करते हैं। उसके मातृ कुल पितृ कुल दोनों तर जाते हैं। सभी लोकों में भ्रमण कर वह व्यक्ति अन्त में शिव लोक में पहुँच जाता है। वह शिव का महान् गण शिव ही हो जाता है।

मनुष्य सब स्नानों में भस्म स्नान से परम पवित्र हो जाता है। दो पहर के बाद बिना जल के ही विभूति लगाना चाहिये। सन्यासी को तार (प्रणव) रूप शिव का ध्यान करना चाहिये। तार दो प्रकार के हैं-- स्थूल और सूक्ष्म। जिसका तात्पर्य पञ्चाक्षर तथा एकाक्षर से है। भस्म तीन प्रकार से वनता है। शिवानल, वेद तथा भव। उसमें अघोर मन्त्र का प्रयोग मुख्य है। अघोर मन्त्र से लकड़ी शुद्ध करके जलावे। वेल, पलाश, शमी, वर और पीपल की लकड़ीं भस्म के लिए उत्तम हैं। लकड़ी, लोहा, मिट्टी, काँच, चाँदी आदि के वर्तनों में बनाई गयी विभूति उत्तम होती है। (इति भस्म माहात्म्य)

भस्म धारण करने की विधि—

त्रिपुण्ड में तीन रेखायें होती हैं जिनमें तीनों देवताओं का निवास है। दोनों भृकुटी के अन्ततक त्रिपुण्ड धारण करें। पहली रेखा मध्यमा से, तीसरी रेखा अनामिका से, बीच में अँगूठे से रेखा खीचे। उसमें अनेक देवता होते हैं। प्रणवाक्षर, (ॐ), शुची, आत्मालोक, श्रुतिप्राण, सूक्ति, सवन, दिवौकस आदि। उक्त देवताओं को प्रणाम करके भस्म धारण करे तो मोक्ष मिलता है। २७ रेखाओं का देवता का ३२।१६।८।५ भेद है। शिर, ललाट, कान, आँख, नाक, मुख, कण्ठ, भुजा, उदर, हाथ, छाती, पञ्जर, नाभी, मुष्क, त्रिवली दोनों जंघा के बीच और चरण इन स्थानों में उक्त देवताओं का नाम लेकर विभूति धारण करे। ८ वसु ८ दिक्पति इन्द्र के नाम लेकर भस्म लगावे।

इति विभूति महात्म्य (शिवपुराण)

T
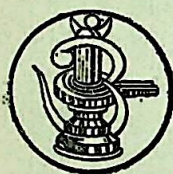
अथ काशी महात्म्य

मंगलम्— काशीगुहां शिवं गंगां शिवाञ्च गणनायकम् ।
लक्ष्मीनारायणौ चैव भैरवादिन्नमाम्यहम् ॥

काशीपतिं चाऽविमुक्तधारकं, उमापतिं वै भवसिन्धुतारकम् ।
विश्वाश्रयं विश्वरूपं महेशं, तं विश्वनाथं शरणं प्रपद्ये ॥

श्रीकाशी नगरी भगवान् विश्वनाथ, सदाशिव भूतभावन, परमपावन शंकरजी के त्रिशूल पर स्थित है। काशीपुरी ॐ का स्वरूपा है। इसकी उपमा धनुष से दी गयी है। जैसे धनुष की दो कोटी (सीरा) होती है, उसी प्रकार दक्षिण में लोलार्क और अस्सी तथा उत्तर में वरुणा नदी और केशव भगवान् हैं। इन दोनों कोटी में गंगाजी को धनुष की डोरा माना गया है तथा काशी नगरी को धनुष। यथा—

"लोलार्ककेशवौ कोटी गंगाज्या नगरंधनुः ।
कलिर्लक्ष्यं शरोधर्म शिवो धन्वी पुनातुमाम् ॥"

धर्म ही बाण है, लक्ष्य है 'कलियुग' (जन्म-मृत्यु से मुक्त करना इसका परम लक्ष्य है)। ऐसे विशिष्ट धनुष को धारण करने वाले शिव मुझे पवित्र करें, मेरे पापों का प्रक्षालन करें। (उपनिषद् में भी इसी प्रकार से कहा है—'तारेण धनुषोचित्तं शरेण ब्रह्मवेधयेत्' ॐकाररूपी धनुष में चित्तरूपी बाण लगाकर ब्रह्मतत्त्व का वेधन करे।'

अन्यानि मुक्तिक्षेत्राणि काशी प्राप्तकराणि वै ।
काशी प्राप्य विमुच्यन्ते नान्यथा तीर्थकोटिभिः ॥

अन्य अयोध्या मथुरा आदि सात पुरियाँ काशी को प्राप्त कराने वाली है और काशी को प्राप्त करके प्राणिमात्र की निश्चित रूप से मुक्ति हो जाती है। अन्य करोड़ तीर्थों में यह बात नहीं। "यत्र कुत्रापि काश्यां हि मरणेन महेश्वर। जन्तो दक्षिण कर्णे तु मत्तारं समुपादिशत्।" (उपनिषद्)

अर्थात् काशी में जहाँ कहीं भी मरने से शंकरजी प्राणियों के दाहिने कानों में तारक मन्त्र का उपदेश करते हैं अतः जीवों की मुक्ति होती है। इसी प्रकार—"त्रिशूलगां काशीमधिश्रित्य त्यक्ताशवो मय्येवसंविशन्ते, एष एवोपदेश, एष एव परमो धर्म।" इति श्रुति। (मुक्तिकोपनिषद्)

काश्यां यो वै मृतश्चैव तस्य जन्मपुनर्ननहि।
ये चैक जन्मनामुक्ति यस्माद् करतले स्थिता॥ (लिङ्ग पु०)

(अनेक जन्म संसार बन्धनिर्मोक्षकारिणी) (स्क० पु०)

संसार भयभीता ये ये बद्धा कर्मबन्धनैः।
येषां क्वापिगतिर्नास्ति तेषां वाराणसीगतिः॥ (का० ख०)

काश्यां हि काशते काशी काशी सर्वप्रकाशिका।
सा काशी विदिता येन तेन प्राप्त हि काशिका॥ (शंकरा०)

काश्यां यत्पतितं वस्तु तत्त्वत्वेह भवेत् यथा।
सुराप्रवाह गंगायां पतितस्तन्मयो भवेत्॥

यथा लोहमणौ स्पर्शात् स्वर्णतां याति निश्चितम्।
तथा काश्यां स्पर्शनाद् वै यत्रूपं भवति ध्रुवम्॥

असिवरुयोर्मध्ये पञ्चक्रोशं महत्तरम्।
अमरामृत्युमिच्छन्ति का कथा त्वितरेजनाः॥

उत्तरं दक्षिणं वापि अयनं न विचारयेत्।
सर्वोप्यस्य शुभकालो ह्यविमुक्ते प्रिये यतः॥

मोक्षं सुदुर्लभ मत्वा संसारं चाति भीषणम्।
अश्मना चरणौ हित्वा वाराणस्यां वसेन्नरः॥

T

काशतेऽत्रयतो ज्योति तन्नामाख्यो य मैश्वरम् ।
अतो नाम्ना परं वस्तु काशीति कथितं विभो ॥

अर्थात्—"भगवान् शंकर के त्रिशूल में स्थित काशी में प्राण त्यागने पर शिव में ही प्रवेश करते हैं, यही शिव का आदेश तथा उपदेश है, यही परम धर्म है। जो प्राणी काशी में मरते हैं, उनका फिर जन्म नहीं होता। उनकी एक ही जन्म में मुक्ति हो जाती है। अनेक जन्मों के संसार बन्ध से 'काशी' मुक्ति देनेवाली है। जो लोग संसार से भयभीत हैं, कर्म बन्धन से बँधे हैं तथा जिसकी कहीं गति नहीं है, उनके लिए काशी ही गति है। (यद्यपि काशी सर्वत्र प्रकाश करती है, किन्तु काशी में ही विशेष रूप से ज्ञान को प्रकाश करने वाली शक्ति है। जिसने उस काशी को जान लिया वही काशी को प्राप्त करता है।) काशी में जो भी वस्तु गिरता है, वह काशी का ही रूप धारण करता है। जैसे गंगा के प्रवाह में सुरा (शराब) गिरता है तो वह भी पवित्र गंगाजल ही हो जाता है। पारसमणि के स्पर्श से लोहा भी सोना हो जाता है। उसी प्रकार काशी के स्पर्श से सब कुछ शिवमय हो (ब्रह्ममय) हो जाता है। अस्सी और वाराणसी के वीच में पञ्चक्रोशात्मिका "काशी महानगरी है। देवता लोग भी इसमें मरना चाहते हैं तो औरों की तो बात ही क्या है ? काशी में उत्तरायण तथा दक्षिणायन का विचार नहीं करना चाहिये। सर्वदा ही यहाँ शुभ दिन वना रहता है। मुक्ति को दुर्लभ मानकर इस संसार में पत्थर से पैर तोड़ कर काशी में निवास करे। काशी में परब्रह्म का ज्योतिर्मय प्रकाश होता है। इसलिए काशी कहते हैं। जो परब्रह्म है वही शिव है।"

काशी नगरी—

एक कवि ने काशी नगरी का निरूपण करते हुए कहा—

परम शिव, विहार भूमि जयतिमातु काशी।
गंगा सिंगार चारुमुक्ति तेरी ही हैं दासी॥

T

वाराणसी बड़ मशान गौरी पीठमासी।
क्षेत्र मोद विपिन अङ्ग पायो सुखराशी॥
ब्रह्म को प्रकाश जहाँ छूटत यम फाँसी।
अङ्ग-अङ्ग देवगण रोम-रोम वासी॥
पञ्चक्रोश रूप महाँज्योति-सी प्रकाशी॥ इत्यादि।

"वाराणसी में गंगा जी उत्तराखण्ड हिमालय से आती है और उत्तर को ही लौट जाती है, उत्तरवाहनी होकर यह सिद्ध करती है कि सृष्टि के संहार का क्रम यहाँ पर समाप्त हो रहा है। संहार का अर्थ नाश नहीं किन्तु मूल कारण में कार्य का लय होना है। अतः पराशक्ति संहार क्रम से शीघ्र मोक्ष देने के लिए काशी में सदा तत्पर हैं। यह सिद्ध हुआ।"

काशीजी का स्वरूप वर्णन--

श्यामा षोडषवर्षिकी सुकरुणा मूर्तिदधानावरा,
हस्ताभ्यामभयं च विश्व जननी विद्येति सा गीयते।
यादृष्ट्वा मरणंगतापि सततं या कीर्तिता संस्तुता
या स्पृष्ट्वा नृभिरात्मतत्त्वममलं दद्याध्रूवं काशिका॥

अर्थात् जिनकी सोलह वर्ष की अवस्था है, करुणा की सुन्दर मूर्ति धारण करती हैं, वर तथा अभय के मुद्राओं से दोनों करकमल सुशोभित हैं। विश्व जननी, ज्ञान की खानी जिन काशी को देखकर, नाम कीर्तन कर स्तुति कर, मरणासन्न मानवों को (जीव समुदायों को) सदा सर्वदा स्पर्श मात्र करके ही अमल आत्मतत्त्व निश्चित प्रदान करती हैं। इस प्रकार काशी का गान करते हैं। भगवान् सदाशिव ने कहा है कि यह काशी नगरी पराशक्ति है, सरणागतों का उद्धार करती है।

क्षेत्रे ऋणत्रयात् काशी मोचयेत् सर्वदेहिनः।
आधारभूता जीवानामाद्याप्रकृतिरव्यया॥

T

मूर्तिरूपा चित्स्वरूपाऽविमुक्तेश्वर सेवया।
पूर्णरूपा स्वमहात्म्यं स्वयमेव प्रकाशते ॥

काशी नगरी देहधारियों को तीनों ऋणों से मुक्त करती है। जीव समुदाय की आधारभूता अव्यय प्रकृति है। अविमुक्तेश्वर शिव की सेवा के लिए मूर्तिमती चित् स्वरूपा है। पूर्ण रूप से अपने महत्त्व को स्वयं प्रकट करती है। और भी देखिये—

काशी ब्रह्मेति विख्याता तत् विवर्तो जगत्भ्रमः।
अविवर्तं तदेवाहुः काशीति ब्रह्मवादिनः ॥

अर्थात् काशी नगरी ही ब्रह्मस्वरूपा है, समस्त विश्व उसी का विवर्त है। अतएव और सब मिथ्या है। अविवर्त ब्रह्म ही काशी है। ऐसा ब्रह्मवादियों का कथन है। सेतुबन्ध टीका—"यत् ब्रह्म सर्ववेदे प्रतिपाद्यं सैव काशीति, कंसुखमाशयति भोजयति स्व भक्तानिति वा" (अपने भक्तों को सुख प्रदान करना काशी का अर्थ है)। "काशन्ते तनु त्यागमात्रेणानन्द रूपतया राजन्ते प्राणिनो यस्यां सा काशी" अर्थात् शरीर त्यागमात्र से काशीजी में प्राणीमात्र आनन्द स्वरूप ब्रह्म रूप से स्थित हो जाते हैं। जो ब्रह्म सम्पूर्ण वेद प्रतिपाद्य है वही काशी है।

श्री काशीजीकी उत्पत्ति—

पार्वतीजी ने भगवान् शंकरजी से कहा—

अस्य क्षेत्रस्य माहात्म्य वक्तुमर्हस्यशेषतः।
ममोपरि कृपांकृत्वा लोकानां हितकाम्यया ॥ (का० ख०)

अर्थात् लोकहित के लिए तथा मेरे ऊपर कृपा करके इस काशी क्षेत्र का सम्पूर्ण महत्त्व बतलाने की कृपा करें। शंकरजी तथा पार्वतीजी के प्रसंग का वर्णन करते हुए सूतजी ने कहा—"सच्चिदानन्द परमात्मा को जगत् की रचना करने की इच्छा हुई और उन्होंने अपने चिदानन्द रूप से तथा अपनी दिव्य शक्ति से प्रकृति एवं पुरुष का निर्माण किया। चिदा-

नन्द स्वरूपाभ्यां पुरुषावपि निर्मितौ' अर्थात्—इन दोनों के कार्य के विषय में संशय होने पर परम शिव की वाणी हुई 'आप तपस्या करें।' तप द्वारा उत्तम सृष्टि होगी।

महा संशयमापन्नौ प्रकृति पुरुषञ्च तौ।
तदा वाणी पमुत्पन्ना निर्माणात् परमात्मनः॥
तपश्चैव प्रकर्तव्यं तत सृष्टिरनुत्तमा॥

उस वाणी को सुनकर उन दोनों ने कहा—हम कहाँ पर तप करें। तपस्थली कहीं भी नहींदिखाई देती। उनके निवेदन को सुनकर शिवजी ने समस्त तेज का सार सम्पूर्ण उपकरणों से परिपूर्ण एक रमणीय नगर का निर्माण किया और अन्तरिक्ष में श्री विष्णु भगवान् के पास उपस्थित कर दिया। उसी में शिवजी का ध्यान करते हुए बहुत समय तक विष्णु ने तपस्या की उनके तपस्या के श्रम से अनेक प्रकार की जलधारा उत्पन्न होकर सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में व्याप्त हो गयी। यह देखकर विष्णु भगवान् ने आश्चर्य से चकित होकर शिर हिलाया और शिर हिलने से भगवान् विष्णु के कानों से मणि का कर्णभूषण गिर पड़ा। वही महान् 'मणिकर्णिका' वढ़ने लगी और तीर्थ रूप में स्थित हुई। वह जलराशि में प्लावित होकर और वढ़ कर पाँच कोश में व्याप्त हो गयी।

शंकर भगवान् ने अपने त्रिशूल में स्थापित कर लिया। उसी पञ्चक्रोशात्मक स्थल में भगवान् विष्णु ने अपनी प्रकृति शक्ति के साथ शयन किया तब भगवान् शिव को प्रेरणा से विष्णु के नाभि कमल से ब्रह्माजी प्रकट हुए। और उन्होंने शिव की आज्ञा से चौदह लोक की रचना की। इनमें कर्मानुसार दुःख से व्याकुल प्रजा के उद्धार के लिये शिवजी ने अपने त्रिशूल में स्थित पञ्च कोशात्मक काशी को त्रिशूल से उतार कर मर्त्य लोक में स्थापित कर दिया। यह समस्त ब्रह्माण्ड प्रलय काल में जब नष्ट हो जाता है, तब भी पञ्चक्रोशात्मक काशी का लय नहीं होता—क्योंकि भगवान् शिव अपने त्रिशूल में सुरक्षित रखते

T

हैं। और फिर सृष्टि होने पर मर्त्य लोक में स्थापित करते हैं। यही काशी-वाराणसी का अद्‌भूत लोकोत्तर चमत्कार हैं।

काशी रहस्य में भी इसी प्रकार की कथा है। एक समय श्वेत वराहकल्प में प्रलय हुआ और सम्पूर्ण पृथ्वी जल में मग्न हुई। तब मह, जन, तप लोक के निवासी ऋषियों ने पृथ्वी का उद्धार करने के लिये पुरुष सूक्त से भगवान् विष्णु का स्तवन किया। उससे प्रसन्न होकर उन्होंने ऋषियों को दर्शन देकर स्तुति करने का कारण पूछा—तब ऋषियों ने कहा हे प्रभो ? सम्पूर्ण पृथ्वी जलमग्न हो गयी इसका उद्धार कीजिये। पृथ्वी के जल मग्न होने पर जल के ऊपर यह छत्राकार ज्योति परम प्रकाश मय है, और जिसको आप आश्चर्य से देख रहे हैं, यह क्या है।

छत्राकारं तु तं ज्योति जलादुर्ध्वं प्रकाशते।
निमग्नायां धरिण्यां तु ननिमज्जति तत् कथम्॥

तब भगवान् विष्णु ने कहा, हम पृथ्वी का उद्धार शीघ्र ही वराह का रूप धारण करके करेंगे। यह जो दीख रहो है—परम ज्यतिर्मय काशी नगरी है।

छत्राकारं परं ज्योति दृश्यते गगने स्थितम्।
तदिदं परमं ज्योतिः काशोति प्रथितं बुधैः॥

अर्थात् —छत्र के आकार का परमज्योति आकाश में स्थिर है। वह जो परम ज्योतिर्मय है, इसे वुध जन काशी ऐसा कहते हैं। भगवान् विष्णु ने कहा लोक के उद्धार के लिये मैंने भगवान् शिव का हृदय में ध्यान किया तब भगवान् शंकर लिङ्ग रूप से हृदय से बाहर प्रकट हो गये, और बढ़कर पञ्चक्रोशात्मक अविमुक्त क्षेत्र हो गये। वह यही काशी नगरी है।

'मया स्मृतो लोक मुक्त्यै प्रादेशं परिभावतः।
लिङ्गरूपधर शम्भु हृदयाद्बहिरागतः॥
महती बुद्धिमासाद्य पञ्चक्रोशात्मकोऽभवत्॥' (इत्यादि)

वाराणसी की उत्कृष्टता—

इस वाराणसी अविमुक्त क्षेत्र में यदि किसी भी जीव ने शरीर त्याग किया तो निश्चित है जन्ममरण के चक्र से सदा के लिये छूटकारा पा जायेगा। चाहे वह किसी योनि में हो वर्णाश्रम में हो। अब प्रश्न उठता है कि यदि वाराणसी में मृत्यु प्राप्त करके प्राणीमुक्त हो जाता है तो धर्म, अधर्म, योग, भक्ति, ज्ञान आदि साधनों के अवलम्ब करने की क्या आवश्यकता है ? इसका उत्तर देते हुए भगवान् शंकर कहते हैं कि पाप रहित प्राणी की तत्काल मुक्ति हो जाती है। और पापियों को भैंरवी यातना का उपभोग करना पड़ता है। तब मुक्ति होती है।

अपापश्च मृतो यो वै सद्यो मोक्ष स मश्नुते।
स पापश्च मृतो यः स्यात् काय ब्यूहान् स मश्नुते॥

अर्थात्—पाप रहित प्राणी के मरने पर तत् काल मुक्ति हो जाती है। और पापी जीव के मरने पर (कायव्यूह में) भैंरवी यातना भोग कर शुद्ध होने पर मुक्ति होती है। (जैसे हरा घाँस और सुखा घाँस)। सुखा घाँस गग्नि में तत्काल भस्म हो जाता है। हरा घाँस धीरे-धीरे जलता है। पापियों को ३६ हजार वर्ष यातना भोगना पड़ता है तव मुक्ति होती है।

शास्त्रों में कर्म तीन प्रकार के बताये गये हैं। १ सञ्चित, २ क्रियमाण तथा ३ प्रारब्ध—पूर्व जन्म के कर्म को संचित, इस जन्म में भोगप्रद कर्म प्रारब्ध तथा इस समय किये जाने वाले कर्म क्रियमाण (आगामी) कहलाते हैं। भोग से प्रारब्ध का क्षय होता है। सञ्चित् तथा क्रियमाण कर्म के नाश में साधनों की अपेक्षा होती है। सञ्चित् क्रियमाण कर्म का काशी जी में विनाश हो जाता है।

"प्रारब्धकर्मणोभोगात् क्षयश्चैव न चान्यथा।
उपायेन द्वयोनाशः कर्मणोः पूजनादिभिः॥
सर्वेषां कर्मणां नाशो नास्ति 'काशोपुरी' विना॥"

T

अर्थात्—प्रारब्ध कर्म का नाश भोगने से ही होता है अन्यथा नहीं। पूजनादि सत्कर्म से उक्त दोनों का नाश होता है।

काशी प्राप्त करके प्रारब्ध कर्म भी अत्यन्त अल्प काल में ही 'शिव' की कृपा से नाश हो जाता है। बिना काशी का नहीं हो पाता।

वाराणसी हमारी संस्कृति या धर्म का सर्वस्व है। अमृतत्त्व प्रदान एवं भाविजन्म हेतु कर्म बिनाशिका है। अविमुक्तेश्वर भगवान् शिवजी यहाँ सदा निवास करते हैं। यहाँ मृत्यु पाने के लिये देवता भी प्रयास करते हैं।

अत्रैव प्राप्यते जीवैः सायुज्य मुक्तिरुत्तमा।
येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसीगतिः॥

पञ्चक्रोशी महापुण्याहत्याकोटि विनाशिनी।
अमरामरणं सर्वेवाञ्छंतीह प्रसूयते॥

वाराणसी सदा सेव्या मोक्षदा शिवरूपिणी।
काशिका लिङ्गरूपा च पञ्चक्रोशसमन्विता॥

शिवामृतं ये श्रुतिभिपिवन्ति, गंगामृतं ये मुख्यतः पिवन्ति।
पिवन्ति ये काश्यमृतं पुनः पुनः न जातुमातुस्तनपाभवन्ति॥

अर्थात्—शिवामृत (शिवजी की कथा मृत) को कानों से पीते हैं। गंगामृत को मुख से पान करते हैं। जो लोग काशी रूपी अमृत को वारम्बार पान करते हैं, सेवन करते हैं, वे कभी भी माता के पयोधर का पान नहीं करते।

काशी नगरी कैलाश से भी श्रेष्ठ है—

कैलाशादधिका काशी सर्वदैव प्रकाशिका।
कैलासे शंकरोप्येक काश्यां सर्वेपिशंकराः॥

अर्थात्—कैलास से काशी श्रेष्ट है, क्योंकि सदा प्रकाश करती है। कैलास में एक शंकरजी रहते हैं। काशी में कंकर-कंकर में शंकर हैं।

असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम् ।
काश्यांवासः सतांसंगः गंगाम्भः शिव पूजनम् ॥

इस असार संसार में चार ही वस्तु सार है, काशीवास, सत्संग, गंगा जल पान और शिवजी का पूजन ? (ये चार वस्तु काशी वास करने से ही सुलभ होते हैं) इसलिये कहावत भी है—

चाना चबैना गंग जल जो पूरवही करतार ।
काशी कबहुन छाडिये विश्वनाथ दरबार ॥

काशीजी की महिमा के कारण ही यह उक्ति प्रसिद्ध है । (इत्यादि)

काशीजी की महिमा तथा शिवजी की बन्दना—

"भूमिष्ठाऽपि न यत्र भूस्त्रिदिवतोऽप्युच्चै रधः स्थाऽपिया,
या बद्धा भुविमुक्तिदास्युरमृतं यस्यां मृताजन्तवः ।
या नित्यं त्रिजगत् पवित्र तटिनी तीरे सुरैः सेव्यते,
सा काशी त्रिपुरारी राजनगरी पायादपायाज्जगत् ॥"

अर्थात् जो पृथ्वीतल पर विराजमान् होने पर भी भूमि नहीं है, जो ऊपर होने पर भी स्वर्ग नहीं (उसे ऊपर है), जो स्वयं भूमण्डल पर बद्ध होने पर भी मुक्ति देने वाली है, जहाँ मृतक प्राणि मुक्त हो जाते हैं (अमर हो जाते हैं) तथा जिसको त्रिलोक पावनी गंगा के तट पर है, सर्वदा देवगण सेवन करते रहते हैं, वही त्रिपुरारी शिव की राजधानी काशी नगरी आपत्तियों से संसार की रक्षा करे ।

"नमस्तस्मै महेशाय यस्य सन्ध्यात्रयच्छलात् ।
यातायातं प्रकुर्वन्ति त्रिजगत्पतयोऽनिशम् ॥"

जिस कारण ब्रह्म की सृष्टि-स्थिति-प्रलयरूप सन्ध्या के व्याज से कार्यरूप त्रैलोक्याधिपति ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर सतत यातायात करते रहते हैं, उस कारण रूप महेश्वर को हम प्रणाम करते हैं ।

T

काशी मुक्ति निर्णय—

वेद शास्त्र पुराणों में कहा गया है कि 'ज्ञानान्मुक्ति' ज्ञान से मुक्ति होती है। 'ऋतेज्ञानान्नमुक्ति' बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं होती। स्कन्द पुराण काशीखण्ड में लिखा है—'काश्यांमरणान्मुक्ति' काशी में मरने से मुक्ति होतो है। इन दोनों वाक्यों में विरोधाभास है। दोनों ही शास्त्र वाक्य हैं। त्रिकालदर्शी ऋषियों के वाक्य हैं। 'ऋषयोमन्त्रद्रष्टार' ऋषि लोग मन्त्रों के द्रष्टा होते थे। वेदान्तों के पारङ्गत थे। उनकी प्रज्ञा ऋतम्भरा थी। सत्य को ग्रहण करने वाली थी। उनका कथन मिथ्या नहीं होता। उनकी शैलो विभिन्न होने से विरोधाभास प्रतीत होता है। परन्तु लक्ष्य या सिद्धान्त एक है। 'काश ब्रह्मतत्त्व प्रकाशः गस्यामवस्थायां सा काशी, तस्यां काश्यां मरणान्मुक्तिः' अर्थात् काशदीप्तौदीप्ति या प्रकाश को कहते हैं। कौन प्रकाश ब्रह्मतत्त्व का प्रकाश या ब्रह्मज्ञान। जैसे श्रुति में 'असतोमा सद्गमय। तमसोमा ज्योतिर्गमय। मृत्योमाअमृतं गमय। इत्यादि। काशी का दूसरा अर्थ वाराणसी भी है। इसका आध्यात्मिक अर्थ जावालोपनिषद में इस प्रकार है—काशी को अविमुक्त क्षेत्र कहा गया है और इस क्षेत्र में प्राणियों के प्राणत्यागने पर शंकरजी ब्रह्मतारक मन्त्र का उपदेश देते हैं, जिससे प्राणियों की मुक्ति होती है। वह अविमुक्त किसमें स्थित है? वाराणसी में। वाराणसी की व्युत्पत्ति यह है—जो इन्द्रियकृत दोषों को वारण करती है। इसी से 'वारणा' हुई और सर्वइन्द्रियकृत पापों का नाश करती है, इसलिए नाशी हुई, तब वाराणसी हुई। काशीखण्ड में काशी का काशी, वाराणसी, रुद्रावास, आनन्दवन, आनन्दकानन इत्यादि नाम हैं। अतः काशी मरण से शिव के द्वारा प्राप्त ज्ञान से मुक्ति मिलती है, बिना ज्ञान के नहीं।

काशी मुक्ति की विशेषता—

स्वतः ज्ञानी पुरुष इस कलिकाल में हजारों में कोई एक ही मुक्त होते हैं। किन्तु काशी में तो सबकी मुक्ति होती है। भगवान् विष्णु ने तपस्या

T

करके शिवजी से वर मांगा कि इस काशी नगरी में अवर्णनीय परम ज्योति का प्रकाश होने से ही इसका नाम काशी है। जरायुज आदि जितने जीव हैं, सब मोक्षलाभ करें । काशी में स्नान, दान, तप, होम, तर्पण, यज्ञ, भोजनादि जितने भी शुभ कर्म किये जायं, वे सब 'मोक्षलक्ष्मी' का सम्पादन करने वाले होते हैं।

भगीरथजी ने अपने पूर्वजों का उद्धार करने के लिए त्रिपथगामिनी गंगाजी को प्रसन्न करके इस भूतल पर लाया। ज्ञानप्रवाहा विमला भागीरथी को आनन्दकानन काशी नगरी में निर्वाणपद के प्रकाशन हेतु उपस्थित कर दिया। अतः काशी नगरी की विशेषता और भी बढ़ गयी। यहाँ पर बड़े-बड़े पातकी भी उत्तरवाहिनी गंगा तथा शिवजी द्वारा प्रदत्त तारकमन्त्र के उपदेश से निश्चय ही मुक्ति पाते हैं। उत्तर दिशा में वरुणा, दक्षिण दिशा में अस्सी इन दोनों नदियों के संगम से यह काशी नगरी वाराणसी के नाम से प्रसिद्ध हुई। वरुणा तो वारण करती है। दुर्वृत्त दुष्कर्मियों के प्रवृत्तियों को रोकती है और असि (तलवार) असत् बुद्धि को दूर करतीं है। काटती है। यह वाराणसी का अर्थ सार्थक है। अतः काशी तथा वाराणसी के आध्यात्मिक एवं आधिभौतिक व्युत्पत्यार्थ पर विचार करने पर पिण्ड तथा ब्रह्माण्ड में समानता है। जो व्यवस्था सूक्ष्म रूप से पिण्ड शरीर की है, वही व्यवस्था स्थूल रूप से भौतिक जगत् की है।

ज्ञानी की मुक्ति तत्काल होती है और अज्ञानी की काशी में मरने से। श्री विश्वनाथजी की अहैतुकी कृपा से तारकमन्त्र के उपदेश से ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् होती है। काशी मरण से तो पुण्यात्मा, पापात्मा, ज्ञानी, अज्ञानी, सभी की मुक्ति होती है। इसमें कोई संशय नहीं है। अयोध्या आदि सात पुरियों में भी मोक्ष की प्राप्ति कही गयी है, किन्तु प्रमुख मान्यता काशी की ही है। अन्य क्षेत्रों में वास करने से मोक्षप्राप्ति के संस्कार की क्रमोन्नति अवश्य होती है और काशी को प्राप्ति होती है।

T

काशी में मरने पर तो निश्चित ही मुक्ति होती है। अतः काशी मरण अति दुर्लभ है। काशी की उत्तमता का परिचय निम्नलिखित उक्तियों में वर्णित है—

गंगातीरमनुत्तमं हि सकलं तत्रापि काश्युत्तमा,
तस्यां सा मणिकर्णिकोत्तम मता यत्रेश्वरोमुक्तिदः ?
देवानामपि दुर्लभंस्थलमिदं पापौघनाशक्षमं,
पूर्वोपार्जित पुण्यपुञ्जगमकं पुण्यैर्जनैः प्राप्यते ॥

अर्थात् "भगवती गंगाजी का तट सम्पूर्ण स्थलों में अतिउत्तम है। उसमें भी श्रीकाशी सर्वोत्तम है। उसमें भी मणिकर्णिका परम उत्तम है, जहाँ पर मुक्तिदाता शिवजी सर्वेश्वर निवास करते हैं। यह काशीपुरी देवताओं को भी दुर्लभ स्थली है। पापों के समूह का नाश करने में सक्षम है। पूर्वजन्म के पुण्यपुञ्ज के उपार्जन करने वाले सुकृर्ताओं (पुण्यात्मा) द्वारा ही प्राप्य है। (पाने योग्य है।")

काशी नगरी का आकार—

कृते त्रिशूलवज्ज्ञेयं त्रेतायां चक्रवत् यथा।
द्वापरे तु रथाकारं शंखाकारं कलौयुगे ॥

अर्थात् सत्ययुग में काशी त्रिशूल के समान तथा त्रेता में चक्र के समान तथा द्वापर में रथ के आकार में और कलयुग में शंख के समान बतायी गयी है।

काशी नाम की विशेषता—

वाराणसीति काशीति महामन्त्रमिदं जपन्।
यावज्जीवं त्रिसन्ध्यन्तु जातु जन्तु न जायते॥

अर्थात् वाराणसी या काशी ऐसा महामन्त्र को तीनों सन्ध्याओं मे जो जीव जप करता है, उसका कभी भी जन्म नहीं होता। काशी शब्द की सिद्धि—काशदीप्तौ = धातु से अच् प्रत्यय तथा ङीप् करने पर सिद्धि

T

होती है। (काशयति प्रकाशयन् इदं सर्वं या मोक्षप्रकाशिका)। शिवजी कहते हैं—सबको प्रकाश करनेवाली मेरी प्रिय नगरी काशी मोक्ष को प्रकाश करने वाली है। अविमुक्त - ब्रह्मतत्त्व ही अविमुक्त काशी है, उससे विभाजित होकर जो माया सृष्टि के रूप में प्रकट हुई। उसमें प्रतिबिम्ब ही पुरुष कहलाया। बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव मिलकर ब्रह्म से आकाश, उससे पृथ्वी तक माया का विलास रूप माया में ही स्थित माया के अधीन है : परन्तु 'अविमुक्त वाराणसी ब्रह्म रूप है।

निर्मुक्तस्वस्मिन् महतत्वे स्थितं ब्रह्म स्वरूपं येन तत् अविर्मुक्तं।

शिवजी इस काशी को कभी नहीं छोड़ते अतः इसे अविमुक्त कहा है।

विमुक्तं न मया यस्यां मोक्षतेन कदाचन।
महत् क्षेत्रमिदं तस्मात् अविमुक्त इति स्मृतः॥

अर्थात् प्रलयकाल में भी शिवजी इसे नहीं छोड़ते, क्षण मात्र भी अविमुक्त (काशी) नहीं छोड़ते। कहीं जाते हैं तो लिंग रूप से अपना प्रतीक छोड़ते हैं। लिङ्ग रूप से नित्य काशी में रहते हैं।

अवि शब्देन पापस्तु वेदोक्तो कथ्यते द्विजैः।
तेन मुक्तं मथा जुष्टं अविमुक्तमतोच्यते॥ (लिं० पु०)

अर्थात् शिवजी ने कहा—अवि शब्द से पाप का कथन है उस पाप से मुक्ति पाने के लिए मैंने सेवन किया, अतः 'अविमुक्त' कहा है।

यथा प्रियतमा देवि मम त्वं सर्वसुन्दरी :
तथा प्रियतमं चैतत् मे सदाऽऽनन्द काननम्॥

अर्थात् शिवजी कहते हैं—हे सुन्दरि पार्वती जिस प्रकार तुम सर्वसुन्दरी मुझे प्यारी हो उसी प्रकार यह आनन्दकानन काशी भी अति प्यारी है।

वरुणा तथा असि नदी का प्राकट्य—वरुणा तथा अस्सी दोनो नदी के मध्य में काशी (वाराणसी) स्थित है। अस्सी नदी शुष्क है और वरुणा जलवाली है। दोनों नदी विष्णु भगवान् के दोनों चरणों से क्रम से निकली

T

हैं। काशी की रक्षा के लिए ये क्षेत्रपाल के रूप में रहती हैं। पुराणों में वरुणा को पिङ्गला, अस्सी को इड़ा तथा वाराणसी को सुषुम्ना के रूप में वर्णन किया है। महाश्मशान— श्म शव मुर्दा और 'शान' शयन करना।

श्मशव्देन शवप्रोक्तं शयनं शानउच्यते।
निर्वाचयति श्मशनार्थं मुनेः शब्दार्थं कोविदाः।
"महान्त्यपि च भूतानि प्रलये समुपस्थिते।
शेरतेथ शवो भुत्वा श्मशानं तु ततोमहान्।"

अर्थात् प्रलयकाल के उपस्थित होने पर सभी महाभूत शव होकर सो जाते हैं। इस लिए महा शमशान कहा जाता है।

"काशी जी का गुणगान"

जयति जयलि काशी काशितः ज्ञानराशिः।
शिवहरि रविधात्री श्रीगणेशाम्बि कानाम्॥
निवसति रियमाद्या तां भजध्वं भजध्वम्॥
स्मरत नमत शुद्धा शुद्धये कीर्तयेध्वम्।

अर्थात् "जय हो जय हो श्री काशी नगरी की जय हो' ज्ञान की खाँनी श्री काशी जी की जय हो' ज्ञान को प्रकाशित करने वाली श्री काशी नगरी की जय हो ? शिव और विष्णु को धारण करने वाली श्री गणेश जी की जननी काशी (शिवा) की जय हो ? यह काशी नगरी अनादि काल से स्थित है इसका सेवन करो, सेवन करो। स्मरण तथा नमस्कार करने से शुद्ध करने वाली श्री काशी नगरी का कीर्तन करो, कीर्तन और गाँन करो, स्मरण तथा नमन मात्र से शुद्ध करने वाली श्री काशी का कीर्तन करो ? कीर्तन करो। (इति) श्री काशी जी की मिट्टी या रज सोने के तुल्य माना जाता है, अतः बाहर ले जाने से सोने की चोरी करने का पाप लगता है। काशी का त्याज्य वस्तु कुछ भी नही है।" "कृत्वापाप सहस्त्राणि पिशाचत्वं बरं नृणाम्' हजारों पापों को करके पिशाच होकर भी काशी वास करना और काशी में मरना उत्तम है।

एकोऽपि ब्रह्मणो येन काश्यां सं वासित प्रिये ।
काशी वास मवाप्यैव ततो मुक्ति स विन्दति ॥ (का. ख.)

अर्थात् काशी में एक भी ब्राह्मण को रहने की सुविधा, निवास, या घर का दान करता है, वह भी काशी वास का फल पाता है और उसे मुक्ति मिलती है ।

"विवेकिने महाविद्यांयुक्ताय प्रियवादिने ।
दातव्यमेव सुगृहं कारयित्वा विशेषतः ॥
गृहदानात् भवेत् मुक्तो वंशवृद्धि तथाऽक्षये ।
अर्थकामादिकं सर्वमाप्नोति गृहदानतः ।
व्यायी कृत्वा धनं किञ्चित् अत्रकृत्वाभुवंशुभम् ॥
गृहमुत्थाप्य योदद्यात् स याति परमंपदम् ॥ (का० ख०)

अर्थात् विवेकी वेदवेत्ता विद्वान् तथा प्रियवादी ब्राह्मण को सुन्दर मकान बनाकर दान कर देना चाहिये । काशी में घर का दान करने से मुक्ति मिलती है तथा वंश की वृद्धि भी होती हैं । गृहदान से अर्थ तथा कामादि सभी पदार्थ मिलते हैं । धन खर्च करके काशीजी में सुन्दर भूमी में मकान बनाकर दान करे तो वह निश्चय ही परम पद को जाता है । (का० ख०)

इस प्रकार काशी की महिमा बतायी गयी है, काशी में मणिकर्णिका का विशेष महत्व है । काशी ही मणि कर्णिका है । ऐसा भी प्रमाण है ।

गंगातीरमनुत्तमं हि सकलं तत्रापि काश्युत्तमा ।
तस्यां सा मणिकर्णिकोत्तममता यत्रेश्वरो मुक्तिदः ॥
देवानामपिदुर्लभं स्थलमिदं पापौध नाशक्षमम् ।
पूर्वोपार्जित-पुण्यपुञ्ज गमकं पुण्यैः जनैः प्रप्यते ॥

अर्थात् गंगा का तट सर्वत्र पवित्र है, काशी में अति पवित्र और उत्तम है, उसमें भी मणिकर्णिका अति उत्तमोत्तम है जहाँ पर शिवजी मुक्ति के दाता हैं । यह स्थल देव दुर्लभ है, पाप समुदाय को नाश करने में

T

सक्षम है। पुण्यात्माओं के द्वारा पूर्व जन्मोंपार्जित पुण्य पुञ्ज से ही इसको प्राप्त किया जाता है। अतः सर्वश्रेष्ट मणिकर्णिका में मध्यान्ह में शिव पार्वती, विष्णु भगवान्, लक्ष्मीजी, ब्रह्मा, इन्द्रादिदेव गण आते हैं और स्नान करते हैं। विष्णु का हरिनाम भी यहाँ स्नान करने से ही पड़ा है। वे पापों का हरण करते हैं। (इति संक्षिप्त काशी महात्म्य) अथ श्री काशी विश्वनाथजी की अन्तरगृही यात्रा या परिक्रमा (का० ख०)

अन्तरगृही यात्रा करने वालों को प्रातः स्नान करके नित्यकर्म से निवृत्त होकर मोद, प्रमोद, सुमुख, दुर्मुख, गणनाथ विनायक, ज्ञानवापी तथा विश्वनाथजी का पूजन करके मुक्तिमण्डप में वैठकर संकल्प लेकर कहे—मैं समस्त पापों की शान्ति के लिए अन्तरगृही यात्रा करूँगा। भगवान् शिव मुझे आज्ञा दें।

अन्तर्गृहस्य यात्रां वै करिष्येऽघौघशान्तये।
देहि आज्ञां महादेव पुनर्दर्शनमस्तुते॥

इस प्रकार से आज्ञा लेकर मौन होकर मणिकर्णिका में स्नान करके यात्रा प्रारम्भ करे और निम्नलिखित स्थलों का दर्शन और पूजन करे।

१. मणिकर्णिकेश्वर महादेव (गोमठ के पास) है।
२. कम्वलाश्वतेश्वर महादेव (काकाराम गली) में हैं।
३. वासुकीश्वर और पर्वतेश्वर (संकठाघाट) में हैं।
४. गंगाकेशव, ललितादेवी (ललिताघाट) में हैं।
५. जरासन्धेश्वर (मीरघाट में गुप्त मूर्ति) हैं।
६. सोमनाथेश्वर (मानमन्दिर के पास) हैं।
७. वराहेश्वर (दशाश्वमेध घाट) में हैं।
८. ब्रह्मेश्वर (वालमुकुन्द चौक के पास) हैं।
९. अगस्तीश्वर (अगस्त कुण्ड के पास) हैं।
१०. कश्यपेश्वर (जंगमबाड़ी आश्रम) में हैं।
११. हरिकेश्वर (जंगमवाड़ी खारी कुआँ) में हैं।

१२. वैद्यनाथेश्वर (कोदई की चौकी) में हैं।
१३. ध्रुवेश्वर (मिसिर पोखरा स्कूल के पास) हैं।
१४. गोकर्णेश्वर (कोदई दैलू गली) में हैं।
१५. हाटकेश्वर (हड़हा मुहल्ले) में हैं।
१६. अस्तिक्षेप तड़ाग। (बेनिया) में हैं।
१७. कीकसेश्वर (राजादरवाजा) में हैं।
१८. भारभूतेश्वर (गोविन्दपुर-शिवकुमार गली) में हैं।
१९. चित्रगुप्तेश्वर (मछरहट्टा) में हैं।
२०. चित्रघण्टादेवी (चन्दुना गली चौक) में हैं।
२१. पशुपतीश्वर (प्रसिद्ध स्थान है)।
२२. पितामहेश्वर (शीतला गली) में हैं।
२३. कमलेश्वर (ब्रह्मपुरी) में हैं।
२४. चन्द्रेश्वर (सिद्धेश्वर) में हैं।
२५. विरसेश्वर-आत्मवीरेश्वर (संकठाघाट) में हैं।
२६. विश्वेश्वर (निमवाली ब्रह्मपुरी) में हैं।
२७. अत्रीश्वर (अग्निश्वर घाट) में हैं।
२८. नागेश्वर (भोसला घाट) में हैं।
२९. हरिश्चन्द्रेश्वर, चिन्तामणि विनायक, सेनाविनायक, वशिष्ठेश्वर, वामदेवेश्वर और सोमाविनायक (संकठाघाट) में हैं।
३०. करुणेश्वर, त्रिसन्ध्येश्वर (ललिता घाट) में हैं।
३१. विशालाक्षी देवी, धर्मेश्वर (विश्ववाहुका) में हैं।
३२. आशा विनायक, वृद्धादित्य (मीरघाट) में हैं।
३३. चतुर्वक्त्रेश्वर, ब्राह्मीश्वर (कोतवाली) में।
३४. चण्डी-चण्डीश्वर (कालिका गली) में हैं।
३५. भवानीशंकर (शुक्रकूप के पास) में हैं।
३६. अन्नपूर्णा, ढुण्डीराज, राजराजेश्वर (ज्ञानवापी) में हैं।
३७. लाँगलीश्वर (खोवा बाजार) में हैं।

T

३८. नकुलीश्वर (अक्षयवट) के पास हैं।
३९. पन्नगेश्वर, परद्रव्येश्वर, निष्कलेश्वर एवं
मार्कण्डेश्वर (दण्डपाणि के पूर्व) में हैं।
४०. अप्सरेश्वर (ज्ञानवापी के पश्चिम) में हैं।
४१. गंगेश्वर (मस्जिद के पूरब या सम्मुख) हैं।
४२. ज्ञानवापी तथा नन्दीकेश्वर (नन्दी के पास) है।
४३. तारकेश्वर, महाकालेश्वर, दण्डपाणि महेश्बर (नैॠत्य कोण के पीपल के नीचे हैं)।
४४. वीरभद्रेश्वर, अविमुक्तेश्व, मोदादि पाँच विनायक तथा ज्ञान-वापी कुआँ) विश्वनाथ मन्दिर के पास हैं।
४५. विश्वनाथजी तथा अन्नपूर्णाजी का दर्शन करके अन्तरगृही यात्रा पूर्ण करके संकल्प छोड़ावे और प्रार्थना करे—

अन्तरगृहस्य यात्रेयं यथा वक्षमयाकृता।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत् प्रसादात् उमापते ॥
(इति अन्तरगृही यात्रा)

अथ काशी को पञ्चक्रोशी यात्रा ५० मील की

२५ कोश की पञ्चक्रोशी यात्रा तीन या पाँच दिन में पूर्ण होती है। इस यात्रा को स्नान तथा नित्यकर्म से निवृत्त होकर करें। काशीनगरी को दाहिने करके चले। शौचादि का त्याग करना, थूकना, खाना-पीना, विश्राम आदि करना हो तो बायीं तरफ करना चाहिये। काशी को शंकरजी का ज्योतिर्लिङ्ग मानकर भक्तिभाव से परिक्रमा करना चाहिये। यात्रा के प्रथम दिन हविष्यान्न का भोजन करे। सर्वप्रथम स्नानादि से निवृत्त होकर ज्ञानवापी में जाय। वहाँ कायिक, वाचिक, मानसिक, ज्ञाताज्ञात पापों के नाश के लिए ज्योतिर्लिङ्ग का, श्रीकाशी विश्वनाथजी तथा अन्नपूर्णाजी, लक्ष्मीनारायण, ढुण्ढीराज, ५६ विनायक, १२ आदित्य, १३ नृसिंह, १६ केशव, रामकृष्ण, केशव, कूर्म, मत्स्यादि अवतारों, विष्णु,

शिव, गौरी आदि से युक्त इस काशी क्षेत्र की प्रदक्षिणा करूँगा, ऐसा कहते हुए संकल्प करके प्रदक्षिणा करे और प्रार्थना करे—हे भगवान् शिव ! मैं आपकी प्रसन्नता के लिए एवं सभी पापों की शान्ति के लिए पञ्चक्रोशी यात्रा करूँगा। यह कहकर मौन धारण करके ढुण्ढिराज गणेशजी से आज्ञा मांगे।

ढुण्ढिराज गणेशान महाविघ्नैक नाशनः।
पञ्चक्रोशस्य यात्रार्थं देह्याज्ञा कृपयाविभो॥

अर्थात् महाविघ्नों का नाश करने वाले ढुण्ढिराज गणेशजी मुझे पञ्चक्रोशी की यात्रा के लिए कृपया आज्ञा दीजिये।

१. पहले दिन की यात्रा (मार्ग के देवता तथा मणिकर्णिका से कर्दमेश्वर तक की यात्रा)—मणिकर्णिकेश्वर, सिद्ध विनायक, गंगाकेशव, ललितादेवी, जरासन्धेश्वर, सोमेश्वर, दालभेश्वर-शूलटंकेश्वर, वाराहेश्वर, दशाश्वमेधेश्वर, बन्दीदेवी, सर्वेश्वर केदारेश्वर, हनुमदीश्वर, लोलार्केश्वर, अर्कविनायक, असी-संगमेश्वर, दुर्गाकुण्डविनायक, दुर्गादेवी का दर्शन तथा प्रार्थना करके प्रणाम करे और आज्ञा माँगकर आगे चले।

जयदुर्गे महादेवी जयकाशी निवासिनी।
क्षेत्रविघ्नहरे देवि पुनर्दर्शनमस्तु ते॥

दुर्गे देवि ? काशी निवासिनी तुम्हारी जय हो, क्षत्र के विघ्नों को हरने वाली तुम्हारी पुनर्दर्शन हो। ऐसा कहकर कर्दमेश्वर में जाय। वहाँ कर्दमेश्वर, सोमनाथ, विरूपाक्षी, नीलकण्ठ आदि का दर्शन कर वहीं रात्री में विश्राम करे।

२. दूसरे दिन की यात्रा—प्रातःकाल उठकर, नित्यकर्म स्नानादि से निवृत्त होकर, कर्दमेश्वरजी से प्रार्थना करके आज्ञा ले।

कर्दमेशमहादेव कशीवासी जन प्रिय।
त्वत्पूजनान्महादेव पुनर्दर्शन मस्तुते॥

T

अर्थात्—हे कर्दमेशर महादेव काशीवासी जनों के प्रिय। आपके पूजन से हेमहादेव ? फिर आपका दर्शन हो।

कर्दमेश्वर से भीमचण्डी के मार्ग के देवगण—नागनाथ, (अमरा गाँउ में) चामुण्डा देवी, मोक्षेश्वर, करुणेश्वर, (वडे गाऊँ) वीरभद्रेश्वर, विकटाक्ष दुर्गा (देल्हन गाऊँ में) उन्मत्त भैरव, नीलगण, कालकूट गण, विमलदुर्गा, महादेव, नन्दिकेश्वर, भृङ्गिरिटिगण, यक्षेश्वर, (चकमालाता देहू में) विमलेश्वर, मोक्षेश्वर, ज्ञानेश्वर, (प्रयागपुर में) अमृतेश्वर, (आसवारी गाँऊ) गन्धर्वसागर, भीमचण्डीदेवी का दर्शन दूध से स्नान करावे। चण्डविनायक, रविरक्ताक्ष, गन्धर्व नरकार्णवतारण, शिव का दर्शन करके रात्री में यहीं विश्राम करे।

३. तीसरे दिन की यात्रा—प्रातः उठकर नित्यकर्म से निवृत्त होकर रामेश्वरम् यात्रा करने के पूर्व भीमचण्डी देवी से प्रार्थना करे आज्ञा लेकर यात्रा करे।

भीमचण्डी प्रचण्डानि मम विघ्न विनाशय।
नमोस्तेस्तु गमिष्यामि पुनर्दर्शनमस्तुते ॥

अर्थात्—हे भीमचण्डी प्रचण्डरूपवाली मेरे दुःख का नाश करो तुम्हें नमस्कार है। मैं जाता हूँ फिर तुम्हारे दर्शन हों। कहकर चल दे।

भीमचण्डी से रामेश्वरम् के मार्ग के देवता—एक पादगण, (कचनार गाँउ) महाभीम (हरे का तलाउ) भैरवनाथ, भैरवी देवी, (हरसोंम गाँउ) भूतनाथ (दीन दयालपुर) सोमनाथ (लगोटिया हनुमान। सिन्धु रावेतीर्थ) सिन्धु सागर तीर्थ, कालनाथ, कपर्दीश्वर, (जन्सा गाँउ), कामेश्वर, बीरभद्र गण, चारुमुख गण (चौखण्डी गाँऊ)। गणनाथेश्वर (भटौली गाँऊ) देहली विनायक, षोड़श विनायक, उद्दण्ड विनायक (भुइली गाँऊ में) उत्कलेश्वर (हीरामणिपुर)। रुद्राणीदेवी (तवोभूमि) वरुणा नदी, रामेश्वर का दर्शन तथा सफेद तिल से पूजन करे। सोम-नाथेश्वर, भरतेश्वर, लक्ष्मणेश्वर, शत्रुघ्नेश्वर, द्यावाभूमीश्वर, नहुषेश्वर

T

आदि का दर्शन करके रात्री में वही विश्राम, करे। प्रातः उठकर स्नानादि से निवृत्त होकर (रामेश्वरजी से आज्ञा लेकर प्रार्थना करके यात्रा करे।

श्रीरमेश्वर रामेण पूजितस्त्वं सनातनः।
आज्ञां देहि महादेव पुनर्दर्शनमस्तु ते॥

अर्थात्—हे रामेश्वर महादेव ! राम द्वारा पूजित, आप सनातन है। फिर आपका दर्शन प्राप्त हो मैं नमस्कार करता हूँ, मुझे आज्ञा दें।

४. चौथे दिन की यात्रा—रामेश्वरम् से शिवपुर या कपिलधारा के मार्ग के देवगण। वरुणा का पुल पार करे असंख्यात तीर्थ (असंख्यात लिङ्ग है) वरुणा पार करके (भुलनीवारी), देव सन्धेश्वर (कारोया गाँउ) हरहुआ के जंगल में। पाशपाणिविनायक, (सरदार वजार) शिवपुर में—पाच पाण्डवों के स्यापित, पञ्चमहादेव का दर्शन करे। याहाँ रात्री में विश्राम करना चाहें तो कर सकते हैं। पुनः सुबह नित्य कर्म करके यात्रा करे परन्तु याहाँ रात्री में रुकने का विधान नहीं है। चलने में असमर्थ लोग यहाँ रात्रि में विश्राम करते हैं। यहाँ धर्मशलयें बनी हैं।

५. दिन की यात्रा—शिवपुर से कपिल धारा के मार्ग के देवतागण। पृथ्वीश्वर महादेव, (पाण्डेयपुर) चौराहा से दक्षिण मार्ग में खजूरी गाँउ सुधाकर रोड (स्वर्ग भूमि पर स्थित है)। यूपसरोवर तीर्थ, सोनातलाऊ, वृषभध्वज तीर्थ, वृषभ ध्वजेश्वर महादेव का दर्शन करके यहाँ शिव गया में खीर का पिण्डदान तथा तपर्ण श्राद्ध भोजनादि करके रात्री में विश्राम करे। प्रातः उठकर नित्य नियमों से निवृत्त होकर यात्रा करते समय वृषभध्वज महादेवजी से आज्ञा लेते हुए प्रार्थना करे—

वृषभध्वजदेवेश पितृणां मुक्तिदायक।
आज्ञांदेहि महादेव पुनर्दर्शनमस्तुते॥

T

अर्थात्—हे शिव ? पितरों को मुक्ति देने वाले महादेव, पुनः मुझे तुम्हारा दर्शन हो। हे वृषभध्वज मुझे आज्ञा दीजिये।

५. (यह भी) पाँच दिन की यात्रा—कपिलधारा से मणिकर्णिका के मार्ग के देव गण—ज्वाला नृसिंह, (कोटा गाँउ) वरुणा संगम, आदिकेशव, संगमेश्वर, खर्वविनायक, मन्दिर के बाहर गंगा किनारे-किनारे जउ छीटे जाते हैं। प्रह्लादेश्वर, (प्रह्लादघाट) त्रिलोचन महादेव, पञ्चगंगा तीर्थ, वेणीमाधव, गभस्तीश्वर, मंगलागौरी (लक्ष्मण बालाघाट) वसिष्टेश्वर, वामदेवेश्वर (संकटाघाट) पर्वतेश्वर, (सिन्धियाघाट) महेश्वर (मणिकर्णिका) सिद्धिविनायक, सप्तावरण विनायक तथा मणिकर्णिका आदि का दर्शन करके स्नान करने के बाद, श्री काशी विश्वनाथजी में जाय। अन्नपूर्णा ढुण्ढिराज, दण्डपाणि, पञ्चविनायक के दर्शन, पूजन करके ज्ञानवापी के पास मुक्ति मण्डप में जाकर पञ्चक्रोश में स्थित सम्पूर्ण देवताओं का स्मरण करके अक्षत छोड़ते हुए (पण्डा) से संकल्प छुड़ावे और प्रार्थना करे कि—

पञ्चकोशस्य यात्रेयं यथा शक्त्यामयाकृता ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादात् उमापते ॥

अर्थात्—हे उमापति महादेव ! पञ्चकोशी की यात्रा जिस प्रकार कही गयी है, वह मैंने किया। जो उसमें त्रुटी रह गयी हो वह आपकी कृपा प्रसाद से पूर्ण होना चाहिये। कालभैरव तथा शाक्षोविनायक का भी दर्शन करना आवश्यक है। तत् पश्चात् अपने-अपने स्थान में जावे दानादि कर्म ब्राह्मणादि को भोजन कराकर स्वयं भी भोजन करे। इस प्रकार पञ्चक्रोशी यात्रा का फल पूर्ण रूप से मिलता है। (का० ख०)

॥ इति पञ्चक्रोशी यात्रा ॥

T

अथ तृतीय खण्ड

"विविध रत्नसंग्रह"

विविधानि च रत्नानि संगृहीतानि वै मया।
पठनं मननं कृत्वा नर प्राप्नोति सद्गतिम् ॥

संस्कृत में विविध स्तोत्र रत्नों का संग्रह किया गया है। इन स्तोत्रों के पाठ से अनेक कार्यों की सिद्धि तथा मनोरथों की पूर्ति होती है।

१८ पुराणों का मंगलाचरण करके अन्य स्तोत्रों का भी संग्रह किया गया है।

(१) शिव पुराण का मंगल—

ॐ आद्यन्त मंगलमजात समान भाव-
ध्यायेतमीशमजरामरमात्म देवम्।

पञ्चाननं प्रवल पञ्चविनोद शीलं
स भावये मनसि शंकरमम्बिकेशः ॥ १ ॥

(२) श्रीमद्भागवत् महापुराण का मंगल—

ॐ जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थे स्वभिज्ञः स्वराट्-
ते ने ब्रह्महृदा य आदि कबये मुह्यन्ति यत् सूरयः।
तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ॥ २ ॥

(३) ब्रह्म पुराण का मंगल—

ॐ यस्मात् सर्वमिदं प्रपञ्चरचितं, मायाजगज्जायते
यस्मिन् तिष्ठति याति चास्तसमये, कल्पानुकल्पे पुनः।

T

यं ध्यात्वामुनयः प्रपञ्चरहितं, विन्दन्ति मोक्षं ध्रुवम्
तं वन्दे पुरुषोत्तमस्यममलं, नित्यं विभुं निश्चलम् ॥ ३ ॥

पुनः—यं ध्यान्ति वुधाः समाधि समये, शुद्धं वियत्सन्निभम्
नित्यानन्दमयं प्रसन्नममलं, सर्वेश्वरं निर्गुणम् ।
व्यक्ताव्यक्तपरं प्रपञ्च रहितं, ध्यानैकगम्यं विभुम्
तं संसार विनाश हेतुमजरं, वन्देहरिं मुक्तिदम् ॥ ४ ॥

(४) स्कन्द पुराण का मंगल—

यस्यज्ञाया जगत् श्रष्टा विरञ्चि पालको हरिः ।
संहर्ता कालरूपाख्यो नमस्तस्मै पिनाकिने ॥ ५ ॥

पुनः—प्रपद्ये देवमीशानं शाश्वतं ध्रुवमव्ययम् ।
महादेवं महात्मानं सर्वस्य जगतः पतिः ॥ ६ ॥

(५) पद्मपुराण का मंगल—

ॐ स्वच्छं चन्द्रावदातं करिकरमकर, क्षोभ संजात फेनं
ब्रह्मोद्भूतिप्रसक्तैर्व्रतनियमपरैः सेवितं विप्र मुख्यैः ।
ॐ कारालंकृतेन त्रिभुवन गुरुणा, ब्रह्मणा दृष्टि भूतं
संभोगा भोग रंम्यं जलमशुभहरं, पौस्कर वः पुनातु ॥ ७ ॥

(६) वायु पुराण का मंगल —

ॐ जयति परासर सूनुः सत्यवती हृदयनन्दनो व्यासः ।
यस्याऽऽस्य कमलगलित वाङ्मयममृतंजगत्पिवति ॥ ८ ॥

(७) ब्रह्म वैवर्त्त पुराण का मंगल—

ॐ गणेश ब्रह्मेश सुरेश शेषा, सुराश्च सर्वे मनवो मुनिन्द्रैः ।
सरस्वती श्रीःगिरिजादिकांश्च, नमन्ति देवाप्रणमन्ति तं विभुम् ॥

पुनश्च—स्थूलस्तनुं विदधतं त्रिगुणं विराजं
विश्व विलोम विवरेषु महान्त माद्यम् ।

सृष्टयुन्मुखः स्वकलयापि ससर्ज सूक्ष्मं
नित्यं समेत्य हृदि यस्तमजं भजामि ॥१०॥

पि—अमृत परमपूर्णं भारती कामधेनु-
श्रुतिगण कृतवत्सो व्यासदेवो दुदोह।
अनतरुचिपुराणं ब्रह्मवैवर्तमेतत्
पिबत पिबत मुग्धा दुग्धमक्षय्यमिष्टम् ॥११॥

) मार्कण्डेय पुराण का मंगल—
ॐ यद्योगिभिर्भवभयार्ति विनाश योग्य-
मासाद्य वंदितमतीव विविक्त चित्तैः।
तद्वत् पुनातु हरिपादसरोज युग्म
आविर्भवेत् क्रमविलङ्घित भूर्भुवः स्वः ॥१२॥

पुनः—पायात् स वः सकल कल्मष भेददक्षः
क्षीरोदकुक्षिफणिभोग निविष्ट मूर्त्तिः।
श्वासावधूत सलिलोत्फणिका कराल
सिन्धु प्रनृत्यमिव यस्य करोति संगात् ॥१३॥

९) लिङ्ग पुराण का मंगल—
ॐ नमोरुद्राय हरये ब्रह्मणे परमात्मने।
प्रधान पुरुषेशाय सर्गस्थित्यन्तकारिणे ॥१४॥

१०) कुर्म्म पुराण का मंगल—
ॐ नमस्कृत्य प्रमेयाय विष्णवे कुर्म्म रूपिणे।
पुराणं संप्रवक्ष्यामि यदुक्तं ब्रह्मयोनिना ॥१५॥

११) मत्स्य पुराण का मंगल—
प्रचण्ड ताण्डवाटोपे प्रक्षिप्ता येन दिग्गजाः।
पातालादुत्पतिष्णो मकरसतयो यस्य ॥१६॥

१२) अग्नि पुराण का मंगल—
ॐ श्रियं सरस्वतीं गौरीं गणेशं स्कन्दमीश्वरम्।
ब्रह्माणं वह्निमिन्द्रादीन् वासुदेवं नमाम्यहम् ॥१७॥

T

(१३) वामन पुराण का मंगल—

ॐ त्रैलोक्य राज्यमाच्छिद्य बलेरिन्द्राय यो ददौ।
नमस्तस्मै सुरेशाय सदा वामन रूपिणे ॥१८॥

(१४) नारद पुराण का मंगल—

ॐ वन्दे वृन्दावनासीनमिन्दिरानन्द मन्दिरम्।
उपेन्द्रं सान्द्रकारुण्यं परानन्दं परात्परम् ॥१९॥

(१५) विष्णु पुराण का मंगल—

ॐ नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥२०॥

(१६) वराह पुराण का मंगल—

ॐ नमस्तस्मै वराहाय लीलयोद्धरते महीम्।
खुरमध्यगतो यस्य मेरुः खणखणायते ॥२१॥

पुनः—दंष्ट्राग्रेणोद्धृतागौरुदधिपरिवृतः पर्वतैर्निम्नगाभिः
साकं मृत्पिण्डवत् प्रागवृहदुरुवपुषाऽन्तरूपेण येन
सोऽयं कंसासुरारि मुर नरकदशास्यन्त कृत् सर्वसंस्थः
कृष्णोविष्णुः सुरेशो नादतु मम रिपूनादिदेवोवराहः ॥२२॥

(१७-१८) गरुड़ पुराण तथा ब्रह्माण्ड पुराण का मंगल—

ॐ नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नोत्तमम्।
देवीं रसस्वतीं व्यासं ततो जय मुदीरयेत् ॥२३॥

(इति पुराणानां मङ्गलानि)

"अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकार पुण्याय पापाय परपीडनम् ॥
श्रूयतां धर्म सर्वस्वं श्रुत्वा चैवाऽवधार्यताम्।
आत्मन प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ॥

T

(इति)

मंगलम्—महापुरुष देवाय साक्षीणे परमात्मने ।
सुग्रीव मित्ररूपाय रामभद्रायते नमः ॥

शंकरकृत—"श्रीरामचन्द्राष्टकम्"

शिवउवाच

सुग्रीवमित्रं परमं पवित्रं, सीता कलत्रं नवमेघ गात्रम् ।
कारुण्यपात्रं शतपत्रनेत्रं, श्रीरामचन्द्रंसततं नमामि ॥ १ ॥

संसारसारं निगमप्रचारं, धर्मावतारं हृतभूमि भारम् ।
सदाऽविकारं सुखसिन्धुसारं, श्रीरामचन्द्रं सततं नमामि॥ २ ॥

लक्ष्मीविलासं जगतां निवासं, लंकाविनाशंभुवन प्रकाशम् ।
भूदेव वासं शरदिन्दुहासं, श्रीरामचन्द्रं सततं नमामि ॥ ३ ॥

मन्दारमालं वचनेरसालं गुणैर्विशालं हृतसप्त तालम् ।
क्रव्याद कालं सुरलोक पालं, श्रीरामचन्द्रं सततं नमामि ॥ ४ ॥

वेदान्तगानं सकलै समानं, हृतारि मानं त्रिदश प्रधानम् ।
गजेन्द्रयानं विगतावसानं, श्रीरामचन्द्रं सततं नमामि ॥ ५ ॥

श्यामाभिरामं नयनाभिरामं, गुणाभिरामं वचनाभिरामम् ।
विश्वप्रणामं कृतभक्त कामं, श्रीरामचन्द्रं सततं नमामि ॥ ६ ॥

लीला शरीरं रणरङ्ग धीरं, विश्वैकसारं रघुवंश हारम् ।
गभीरनादं जीतसर्ववादं, श्रीरामचन्द्रं सततं नमामि ॥ ७ ॥

खले कृतान्तं स्वजनेविनीतं, सामोपगीतं मनसा प्रतीतम् ।
रागेणगीतं वचनादतीतं, श्रीरामचन्द्रं सततं नमामि ॥ ८ ॥

श्रीरामचन्द्रस्य वराष्टकं त्वां मयेरितं देवि ! मनोहराये ।
पठन्ति शृण्वन्ति गृणन्ति भक्त्या, तेस्वीयकामान्प्रलभन्ति नित्यम् ॥९॥

(इति आनन्द रामायणान्तर्गत रामचन्द्राष्टकम्) ।

T

मंगलम्—रामचन्द्रस्य वामाङ्गे शोभितां जनकात्मजाम् ।
जगत्पूज्यां शुभाङ्गीं त्वां नमामि रामवल्लभाम् ॥

ब्रह्माकृत्—'श्रीसीतानवक स्तोत्रम्'

जनकजात्मजे राघवप्रिये, कनकभासुरे भक्तपालिके ।
दशरथात्मजप्राणवल्लभे, तवपदाम्बुजालिः शिरोऽस्तु मे ॥ १ ॥
मूलकासुर प्राण घातिके, रामरक्षिते रामसेविते ।
राममोहिनी स्यन्दनस्थिते, त्वत्पदाम्बुजालिः शिरोऽस्तुमे ॥ २ ॥
राममञ्चकाधिष्ठिते रमे, राम वीजिते रामलालिते ।
राम संस्तुते रामरञ्जिते, त्वत्पदाम्बुजालिः शिरोऽस्तु मे ॥ ३ ॥
लोकपावनी श्री रजेवरे, भूमिकन्यके लोक पालिके ।
पद्मलोचने धरात्मजेपरे, त्वत्पदाम्बुजालिः शिरोऽस्तुमे ॥ ४ ॥
कञ्जलोचने नागगामिनी, स्वीयसत्सुखे रम्यरूपिणि ।
रुक्म भूषिते मौक्तिकाङ्किते, त्वत्पदाम्बुजालिः शिरोऽस्तुमे ॥ ५ ॥
जलरुहानने चित्र वासिनी, त्वमवसिसदा स्वीयसेवकान् ।
मुनिरिपून्सदा दुःखदायिके, त्वत्पदाम्बुजालिः शिरोऽस्तुमे ॥ ६ ॥
त्वन्मुखेक्षणाद्राक्षसांपतिः, प्राप संक्षयं रामसत्प्रिये ।
त्वत्दृगेक्षणाल्लज्जितामृगी, त्वत्पदाम्बुजालिः शिरोऽस्तु मे ॥ ७ ॥
कुशलवाम्बिके जलरुहानने, जलरुहेक्षणेपापदाहिके ।
मधुरसुस्वने नूपुर सुस्वने, त्वत्पदाम्बुजालिः शिरोऽस्तु मे ॥ ८ ॥
घ्राणमुत्तमं तेस्मितानने. तेऽधरः शुभोविम्बसन्निभः ।
अद्य वै त्वया मूलकासुरो, मारितोरणे तारिता वयम् ॥ ९ ॥
ब्रह्मणेरितं नवकमुत्तमं, भास्करोदये पठतिः य पुमान् ।
सर्वं वाञ्छितं लभति सोत्र ना, प्राप्नुयात् सुखं रामसन्निधिम् ॥ १० ॥

(इति आनन्द रामायणान्तरगत सीता नवमम्)

मंगलम्—रामचन्द्रं जगत् पूज्यं रघुवंश विभूषम् ।
लोकानन्द प्रदातरं तमीशं प्रणमाम्यहम् ॥

पक्षीकृत्—'श्रीरामनवक स्तोत्रम्'

जयतुराघवो जानकीयुतो, जयऽखिलेश्वर राजकेश्वरः ।
दशरथात्मजो लक्ष्मणा ग्रजो, जयतु नापति ताटिकान्तकः ॥ १ ॥

जयतु कौशिकस्याध्वरंगतो, जयतु राक्षसां मारकोमहान् ।
जयतु गौतमऽहल्यया स्तुतो, जयतु जानकीतात मानितः ॥ २ ॥

जयतु नः पतिश्चापखण्डनो, जनकजावरोन्मुक्त मालया ।
नृपसभाङ्गणे कौशिकानुगः, परम शोभितश्चातिहर्षित ॥ ३ ॥

जयतु भूमिजांघ्रयोस्तदा मुदा, निज करोत्पलेस्थाप्यराघवः ।
कमल हस्तके नाकरोन्नति, स रघुनन्दनो पातु नः सुखम् ॥ ४ ॥

जयतु भूमिजालिङ्गितो महान्, जनमनोहर चातिशोभनः ।
परशुरामदं धृत्य वै धनु, निजपितुर्तदाऽदर्शयन् बलम् ॥ ५ ॥

जयतु कैकयी प्रेरितोवनं, जयतु सीतया भोग कृच्चिरम् ।
जयतु पर्वतेवास कृच्चिरं, जयतु योत्रिणा पूजितो वने ॥ ६ ॥

जयतु ते विराधस्य घातकृत्, जयतु दूषणादि प्रमर्दनः ।
जयतु यो मृगं मोचयन् भवात्, जयतु यः कबन्धक्षणाज्जहौ ॥७॥

जयतु वालिहा सेतु कारको, जयतुरावणादिक मर्दकः ।
जयतु स्वं पदं प्रापसीतया, जयतुमंगल स्नान कृन्मुदा ॥ ८ ॥

जयतु वाक्यतो भूसुरस्य यः, सकल भूतल पर्यटन् चिरम् ।
जयतु याग कृल्लोक शिक्षया, जयतु जानकी रञ्जयन् स्थितः ॥९॥

रघुवरस्य यत्पक्षिभिकृतं, नवकमुत्तमं यः पठिष्यति ।
तपन निर्गमे भक्ति तत्परो, निजमनार्थितं संगमिष्यति ॥१०॥

T (इति आनन्द रामायणान्तर्गतराम नवकम्)

मंगलम्—नमस्ते वासुदेवाय विष्णवे परमात्मने ।
समस्त क्लेशनाशाय व्यापकाय नमोनमः ॥

"समस्त पापनाशक स्तोत्रम्"

विष्णवे विष्णवे नित्यं विष्णवे विष्णवे नमः ।
नमामि विष्णुं चित्तस्थमहंकार गतिं हरिम् ॥ १ ॥

चित्तस्थमीश - मव्यक्त - मनन्तम - पराजितम् ।
विष्णुमीड्यमशेषेण अनादिनिधनं विभुम् ॥ २ ॥

विष्णुश्चित्तगतो यन्मे विष्णुर्वुद्धि गतश्च यत् ।
यच्चाहंकारगोविष्णुर्यद्विष्णुर्मयि संस्थितः ॥ ३ ॥

करोति कर्मभूतोऽसौ स्थावरस्य चरस्य च ।
तत् पापं नाशमायातु तस्मिन्नेवहि चिन्तिते ॥ ४ ॥

ध्यातो हरति यत् पापं स्वप्ने दृष्टस्तु भावनात् ।
तमुपेन्द्रमहं विष्णुं प्रणतार्तिहरं हरिम् ॥ ५ ॥

जगत्यस्मिन्निराधारे मज्जमाने तमस्यधः ।
हस्तावलम्बनं विष्णुं प्रणमामि परात्परम् ॥ ६ ॥

सर्वेश्वर सर्वविभो परमात्मन्नधोक्षज ।
हृषीकेश हृषीकेश हृषीकेश नमोऽस्तुते ॥ ७ ॥

नृसिंहानन्त गोविन्द भूतभावन केशव ।
दुरुक्तं दुष्कृतं ध्यातं शमयाद्यं नमोऽस्तुते ॥ ८ ॥

यन्मयाचिन्तितं दुष्टं स्वचित्त वसवर्तिना ।
अकार्यं महदत्युग्रं तच्छमं नय केशव ॥ ९ ॥

ब्रह्मण्यदेव गोविन्द परमार्थपरायण ।
जगन्नाथ जगद्धातः पापं प्रशमयाच्युतः ॥ १० ॥

यथा पराह्णे सायाह्णे मध्याह्णे च तथा निशि ।
कायेन मनसा वाचा कृतं पापमजानता ॥ ११ ॥

जानता च हृषीकेश पुण्डरीकाक्ष माधव ।
नामत्रयोच्चारणतः पापं यातु मम क्षयम् ॥ १२ ॥

शरीरं मे हृषीकेश पुण्डरीकाक्ष माधव ।
पापं प्रशमयाद्य त्वं वाक्कृतं मम माधव ॥ १३ ॥

यद्भुञ्जन् यत्स्वपंस्तिष्ठन् गच्छन् जाग्रद् यदास्थितः ।
कृतवान् पापमद्याहं कायेन मनसा गिरा ॥ १४ ॥

यत् स्वल्पमपि यत् स्थूलं कुयोनि नरका वहम् ।
तद् यातु प्रशमं सर्वं वासुदेवानुकीर्तनात् ॥ १५ ॥

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं च यत् ।
तस्मिन् प्रकीर्तिते विष्णो यत् पापं तत् प्रणश्यतु ॥ १६ ॥

यत् प्राप्य न निवर्तन्ते गन्धस्पर्शादि वर्जितम् ।
सूरयस्तत्पदं विष्णोस्तत् सर्वंशमयत्वघम् ॥ १७ ॥

पापप्रणाशनं स्तोत्रं यः पठेत् श्रृणुयादपि ।
शारीरैः मानसैः वाक्जैः कृतैः पापैः प्रमुच्यते ॥ १८ ॥

सर्वपाप ग्रहादिभ्यो याति विष्णो परं पदम् ।
तस्मात् पापेकृते जप्यं स्तोत्रं सर्वाघमर्दनम् ॥ १९ ॥

प्रायश्चित्त मघौघानां स्तोत्रं व्रतकृते वरम् ।
प्रायश्चित्तैः स्तोत्र जपै व्रंतैर्नश्यतिपातकम् ॥ २० ॥

(इतिश्री विष्णोः समस्त पापनाशक स्त्रोत्रम् ॥)

धर्मेण राज्यं लभते मनुष्यः, स्वर्गं च धर्मेण नर प्रयाति ।
आयुश्च कीर्तिञ्च तपश्च धर्मं, धर्मेण मोक्षं लभते मनुष्यः ॥

मंगलम्—अहल्योद्धारकारिणं पतितोद्धारकारिणम् ।
मुनीनां सुखदं दिव्यं रामचन्द्रं नतोऽस्म्यहम् ॥

अहल्याकृत श्रीराम स्तोत्रम्

(पापक्षयार्थं पुत्र प्राप्तार्थं (अहल्योवाच)

अहोकृतार्थास्मिजगन्निवास ते, पादाब्ज संलग्न रजकणादहम् ।
स्पृशामियत्पद्मजशंकरादिभि, विमृग्यते रन्धितमानसैः सदा ॥ १ ॥

अहोविचित्रं तव रामचेष्टितं, मनुष्य भावेन विमोहितं जगत् ।
चलस्यजस्रं चरणादिवर्जितः, सम्पूर्ण आनन्द मयोतिमायिकः ॥ २ ॥

यत्पादपंकजपराग पवित्र गात्रा,
भागीरथी भवविरञ्चिमुखान्पुनाति ।
साक्षात् स एव मम दृग्विषयोयदास्ते
किं वर्ण्यते मम पुराकृत भागधेयम् ॥ ३ ॥

मर्त्यावतारे मनुजा कृतिं हरिं, रामाभिधेयं रमणीय देहिनम् ।
धनुर्धरं पद्मविशाललोचनं भजामिनित्यं न परान् भजिष्ये ॥ ४ ॥

यत्पाद पंकजरजः श्रुतिभिर्विमृग्यं,
यन्नाभिपंकजभव कमलासनश्च ।
यन्नामसाररसिकोभगवान् पुरारि,
स्तं रामचन्द्रमनोशंहृदिभावयामि ॥ ५ ॥

यस्यावतार चरितानि विरञ्चिलोके,
गायन्ति नारद मुखाभवपद्मजाद्याः ।
आनन्दजाश्रुपरिषिक्त कुचाग्रसीमा,
वागीश्वरी च तमहं शरणं प्रपद्ये ॥ ६ ॥

सोऽयंपरात्मापुरुषपुराण, एक स्वयं ज्योतिरनन्त आद्यः ।
माया तनु लोकविमोहनीयं, धत्तेपरानुग्रह एष रामः ॥ ७ ॥

अयं हि विश्वोद्भव संयमाना, मेकस्वमाया गुणविम्बतो यः ।
विरञ्चिवृष्णीश्वर नामभेदान्, धत्तेस्वतन्त्रः परिपूर्णआत्मा ॥ ८ ॥

नमोस्तुते रामतवांघ्रिपंकजं, श्रियाधृतं वक्षसिलालितंप्रियात् ।
आक्रान्तमेकेन जगत्त्रयंपुरा, ध्येयं मुनीन्द्रैरभिमान वर्जितैः ॥ ९ ॥

जगतामादिभूतस्त्वं जगत्तत्त्वं जगदाश्रयः ।
सर्वभूतेषु - संयुक्त एकोभातिभवान् परः ॥ १० ॥

ओंकारवाच्यस्त्वं राम वाचामविषय पुमान् ।
वाच्यवाचक भेदेन भवानेव जगन्मयः ॥११॥

कार्य कारण कर्तृत्व फलसाधन भेदतः ।
एको विभाति रामस्त्वं मायया वहुरूपया ॥१२॥

त्वन्माया मोहित धियस्त्वं न जानन्ति तत्वतः ।
मानुषं त्वांभिमन्यन्ते मायिनं परमेश्वरम् ॥१३॥

आकाशवत्त्वं सर्वत्र वहिरन्तर्गतोमलः ।
असङ्गोह्यचलोनित्यः शुद्धो वुद्धः सदव्यय ॥१४॥

योषिन्मूढा हमज्ञाते तत्त्वं जाने कथं प्रभो ।
तस्मात्ते शतशो राम नमस्कुर्यामनन्य धीः ॥१५॥

देव मे यत्र कुत्रपि स्थिताया अपिसर्वदा ।
त्वत्पाद कमलेसक्ता भक्तिरेव सदास्तु मे ॥१६॥

नमस्ते पुरुषाध्यक्ष नमस्ते भक्तवत्सल ।
नमस्तेऽस्तु हृषिकेश नारायण नमोस्तुते ॥१७॥

भवभय हरमेकं भानुकोटि प्रकाशं
करधृत शर चापं कालमेधा वभासम् ।

कनकरुचिर वस्त्रं रत्नवत् कुण्डलाढ्यं
कमलविषदनेत्रं सानुजं राममीडे ॥१८॥

T

स्तुतैवं पुरूषं साक्षाद्राघवं पुरतः स्थितंः।
परिक्रम्य प्रणम्याशु सानुज्ञाता ययौपतिम् ॥१९॥
अहल्याया कृतं स्तोत्रं यः पठेत् भक्ति संयुतः।
स मुच्यतेऽखिलैः पापैः परंब्रह्माधिगच्छति ॥२०॥
पुत्राद्यर्थे पठेद्भक्त्या रामं हृदिनिधाय च।
सम्वत्सरेण लभते वन्ध्या अपि सुपुत्रकम्।
सर्वान्कामानवाप्नोति रामचन्द्र प्रभावतः ॥२१॥

(इति राम स्त्रोत्रम्)

निरावलम्बस्य ममावलम्बं विपाटिताशेष विपत्कदम्बम्।
मदीय पापाचल पातशम्वं प्रवर्ततां वाचि सदैव बम् बम् ॥

मंगलम्—हरिहर स्वरूपाय परब्रह्म स्वरूपिणे।
पुनर्जन्म विनाशाय प्रणमामि परं शिवम् ॥

"पुनर्जन्म नाशकं स्त्रोत्रम्"

(धर्मराज उवाच)

गोविन्द माधव मुकुन्द हरे मुरारे ?
शम्भो शिवेश शशिशेखर शूलपाणे।
दामोदराच्युत जनार्दनवासुदेव ?
त्याज्या भटा य इति संतत मानमन्ति ॥ १ ॥
गंगाधरान्तकरिपो हर नील कण्ठ ?
वैकुण्ठ कैटभरिपो कमठाब्ज पाणे ?
भूतेश खण्डपरशो मृड चण्डिकेश ॥ त्याज्या० २ ॥
विष्णोर्नृसिंह मधुसूदन चक्रपाणे ?
गौरीपते गिरिश शंकर चन्द्रचूड़ ?
नारायणासुर निवर्हण शार्ङ्गपाणे ॥ त्याज्या० ३ ॥

मृत्युञ्जयोग्र विषमेक्षण कामशत्रो ?
श्रीकान्त पीतवसनाम्बुद नील शौरे ?
ईशान कृत्तिवसन त्रिदशैकनाथ ॥ त्याज्या० ४ ॥

लक्ष्मी पते मधुरिपो पुरुषोत्तमाद्य ?
श्रीकण्ठ दिग्वसन शान्त पिनाकपाणे।
आनन्दकन्द धरणीधर पद्मनाभ ॥ त्याज्या० ५ ॥

सर्वेश्वर त्रिपुरसूदन देव देव ?
ब्रह्मण्यदेव गरुड़ध्वज शूल पाणे।
त्र्यक्षोरगाभरण वालमृगाङ्क मौले ॥ त्याज्या० ६ ॥

श्रीराम राघव रमेश्वर रावणारे।
भूतेश मन्मथरिपो प्रमथाधिनाथ ?
चाणूर मर्दन हृषिकपते मुरारे ॥ त्याज्या० ७ ॥

शूलिन् गिरीशरजनीशकलावतंस ?
कंश प्रणाशन सनातन केशिनाश ?
भर्ग त्रिनेत्र भव भूतपते पुरारे ॥ त्याज्या० ८ ॥

गोपीपते यदुपते वसुदेव सूनो ?
कर्पुरगौर वृषभध्वज भालनेत्र ?
गोवर्द्धनोद्धरण धर्मधूरीण गोप ॥ त्याज्या० ९ ॥

स्थाणो त्रिलोचन पिनाकधर स्मरारे।
कृष्णानिरुद्ध कमलावर कल्मषारे।
विश्वेश्वर त्रिपथगार्द्र जटाकलाप ॥ त्याज्या० १० ॥

अष्टोत्तराधिक शतेन सुचारु नाम्नां।
संदर्भितां ललित रत्न कदम्बकेन।
सन्नामकां दृढगुणां द्विजकण्ठगां यः।
कुर्यादिमां स्रजमहोसयमं न पश्येत् ॥१०॥

T

(अगस्तिरुवाच)

यो धर्मराज रचितां ललित प्रबन्धां
नामावलीं सकल कल्मष बीज हन्त्रीम् ।
धीरोत्र कौस्तुभभृतः शशि भूषणस्य
नित्यं जपेद् स्तन रसं स पिवेन्नमातुः ॥११॥

(इति पुनर्जन्म नाशक स्त्रोत्रम्)

मंगलम्—यज्ञ कर्म कल्पवासः मकरे माघ संयुते ।
भवन्ति यस्य संप्राप्त्या प्रयागं तंनमास्यहम् ॥

"श्री प्रयागाष्टकम्"

सुर मुनि दिति जेन्द्रैः सेव्यते योऽस्त तन्द्रै-
र्गुरुतर दुरितानां का कथा मानवानाम् ।
सभुवि सुकृत कर्तुर्वाञ्छिता वाप्ति हेतु-
र्जयति विजित याग तीर्थ राज प्रयागः ॥ १ ॥

श्रुति प्रमाणं स्मृतयः प्रमाणं, पुराण मप्यत्र परं प्रमाणम् ।
यत्रास्ति गंगा यमुना प्रमाणं, स तीर्थ राजो जयति प्रयागः ॥ २ ॥

न यत्र योगाचरण प्रतीक्षा, न यत्र यज्ञेष्टि विशिष्ट दीक्षा ।
न तारक ज्ञान गुरोरपेक्षा, स तीर्थ राजो जयति प्रयागः ॥ ३ ॥

चिरं निवासं न समीक्षते यो, ह्युदारचित्तः प्रददाति कामान् ।
यः कल्पितार्थाश्चददाति पुंसां, स तीर्थराजो जयति प्रयागः ॥ ४ ॥

तीर्थावली यस्य तु कण्ठ भागे, दानावली वल्गति पादमूले ।
व्रतावली दक्षिणबाहुमूले, स तीर्थराजो जयति प्रयागः ॥ ५ ॥

यत्राप्लुतानां न यमो नियन्ता, यत्र स्थितानां सुगति प्रदाता ।
यत्राश्रितानाममृत प्रदाता, स तीर्थराजो जयति प्रयागः ॥ ६ ॥

सितासिते यत्र तरङ्ग चामरे, नद्यौविभाते मुनिभानुकन्यके ।
नीलातपत्रं वट एव साक्षात् स तीर्थराजो जयति प्रयागः ॥ ७ ॥

पुर्यं सप्त प्रसिद्धाः पतिवचनरता तीर्थराजस्य नार्यो-
नैकव्येनातिहृद्या प्रभवति च गुणैः काशते ब्रह्म यस्याम् ।
सेयं राज्ञी प्रधाना प्रियवचनकरी मुक्तिदाने नियुक्ता
येन ब्रह्माण्डमध्ये सजयति सुतरां तीर्थराज प्रयागः ॥ ८ ॥

(इति श्री मत्स्य पुराणे प्रयागाष्टम्)

तुलसी महात्म्य

(श्री तुलसी कवच)

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

अस्य श्रीतुलसी कवच स्तोत्र मन्त्रस्य श्रीमहादेव ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः । श्रीतुलसी देवता, मन ईप्सित कामना सिध्यर्थे जपेविनियोगः ॥

तुलसी श्रीमहादेवी नमः पङ्कज धारिणि ।
शिरो मे तुलसी पातु भालं पातु यशस्विनी ॥ १ ॥

दृशो मे पद्मनयना श्रीसखीश्रवणे मम ।
घ्राणं पातु सुगन्धा मे मुखं च सुमुखी मम ॥ २ ॥

जिह्वा मे पातु शुभदा कण्ठं विद्यामयी मम ।
स्कन्धौ कल्हारिणी पातु हृदयं विष्णु वल्लभा ॥ ३ ॥

पुण्यदा मे पातु मध्यं नाभिं सौभाग्यदायिनी ।
कटिं कुण्डलिनी पातु उरु नारद वन्दिता ॥ ४ ॥

जननी जानुनिपातु जंघे सकल वन्दिता ।
नारायणप्रिया पादौ सर्वदा सर्वसाक्षिणी ॥ ५ ॥

संकटे विषमेदुर्गे भये वादे महाहवे ।
नित्य हि सन्ध्योः पातु तुलसी सर्वतःसदा ॥ ६ ॥

इतीदं परमं गुह्यं तुलस्या कवचामृतम् ।
मर्त्यानाममृतार्थायभीतानामभयायच ॥ ७ ॥
मोक्षाय च मुमुक्षुणां ध्यायिनां ध्यानयोगकृत् ॥ ८ ॥
वश्यायवश्य कामानां विद्यायैवेदवादिनाम् ।
द्रविणाय दरिद्राणां पापीनां पापशान्तये ॥ ९ ॥

अन्नाय क्षुधितानाञ्च स्वर्गाय स्वर्गमिच्छताम् ।
पशव्यं पशुकामानां पुत्रदं पुत्रकांक्षिणाम् ॥ १० ॥
राज्याय राज्यभ्रष्टानामशान्तानांप्रशान्तये ।
भक्त्यार्थं विष्णुभक्तानां विष्णौ सर्वान्तरात्मनि ॥ ११ ॥

जाप्यं त्रिवर्गसिध्यार्थं गृहस्थेन विशेषतः ।
उद्यन्तं चण्डकिरणमुपस्थाय कृताञ्जलि ॥ १२ ॥

तुलसी काननेतिष्ठन्नासीनो वा जपेदिदम् ।
सर्वान्कामान वाप्नोति तथैव मम सन्निधिम् ॥ १३ ॥

मम प्रियकरं नित्यं हरिभक्ति विवर्द्धनम् ।
या स्यात् मृत प्रजा नारी तस्या अङ्गंप्रमार्जयेत् ॥ १४ ॥

सा पुत्रंलभते दीर्घंजीवितं चाप्यरोगिणम् ।
वन्ध्याया मार्जयेदङ्गं कुशैर्मन्त्रेण साधकः ॥ १५ ॥
सापिसम्वत्सरादेव गर्भंधत्ते मनोहरम् ।
अश्वत्थेराजवश्यार्थी जपेदग्नेः सुरूपभाक् ॥ १६ ॥

पलाशमूले विद्यार्थी तेजोर्थेऽभिमुखोरविः ।
कन्यार्थे चण्डिकागेहे शत्रुहत्यैगृहे मम ॥ १७ ॥

श्रीकामो विष्णुगेहे च उद्याने स्त्रीवशाभवेत् ।
किमत्र वहुनोक्तेन शृणु सैन्येश तत्वतः ॥ १८ ॥
यं यं काममभिध्यायेत् तं तं प्राप्नोत्यसंशयम् ।
मम गेहगतस्त्वं तु तारकस्य वधेच्छया ॥ १९ ॥
जपन् स्तोत्रं च कवचं तुलसी गतमानसः ।
मंगलात्तारकं हन्ता भविष्याति न संशय ॥ २० ॥
इति श्री ब्रह्माण्ड पुराणे तुलसी कवचं सम्पूर्णम् ।

कालभैरवाष्टकम्

देवराजसेव्यमानपावनांघ्रिपङ्कजं
व्यालयज्ञसूत्रमिन्दुशेखरं कृपाकरम् ।
नारदादियोगिवृन्दवन्दितं दिगम्बरं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे ॥१॥

भानुकोटिभास्वरं भवाब्धितारकं परं
नीलकण्ठमीप्सितार्थदायकं त्रिलोचनम् ।
कालकालमंबुजाक्षमक्षशूलमक्षरं । काशिका० ॥२॥

शूलटंकपाशदण्डपाणिमादिकारणम्
श्यामकायमादिदेवमक्षरं निरामयं
भीमविक्रमं प्रभुं विचित्रतांडवप्रियं । का० ॥३॥

भुक्तिमुक्तिदायकं प्रशस्तचारुविग्रहं
भक्तवत्सलं स्थितं समस्त लोकविग्रहं
विनिक्वणन्मनोज्ञहेमकिंकिणीलसत्कटिं । का० ॥४॥

धर्मसेतुपालकं त्वधर्ममार्गनाशकं
कर्मपाशमोचकं सुशर्मदायकविभुम्
स्वर्णवर्णशेषपाशशोभितांगमण्डलं । का० ॥५॥

रत्नपादुकाप्रभाभिरामपादयुग्मकं
नित्यमद्वितीयमिष्टदैवतं निरञ्जनम्
मृत्युदर्पनाशनं करालदंष्ट्रमोक्षणं । का० ॥६॥

अट्टहासभिन्नपद्मजांडकोशसंतति
दृष्टिपातनष्टपापजालमुग्रशासनम्
अष्टसिद्धिदायकं कपालमालिकंधरं । का० ॥७॥

भूतसंघनायक विशालकीर्तिदायकं
काशिवासलोकपुण्यपापशोधकं विभुम्
नीतिमार्गकोविदं पुरातनं जगत्पत्ति । का० ॥८॥

कालभैरवाष्टकं पठन्ति ये मनोहरं
ज्ञानमुक्तिसाधनं विचित्रपुण्यवर्धनम् ।
शोकमोहदैन्यलोभकोपतापनाशनम्
ते प्रयान्ति कालभैरवांघ्रिसंनिधिं ध्रुवम् ॥९॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यं विरचितं कालभैरवाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

T

"दीक्षा ग्रहण महात्म्य तथा सत् गुरु महात्म्य"

दीक्षा ग्रहण करने का चारों वर्णों के लोगों का अधिकार है। बिना दीक्षा के कोई धार्मिक कार्य फलदायक नहीं होते। जैसे पत्थर से मोती नहीं उत्पन्न होते। दीक्षा लेने से करोड़ों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। जो लोग दीक्षा लिये बिना मर जाते हैं वे रौरव नरक में पड़ते हैं। कोई मनुष्य गुरुमुख हुए बिना स्वयं मन्त्र जप करता है उसको फल नहीं मिलता दोष लगता है। अपने जन्म नक्षत्र में राशि और नाम का चक्र ठीक मिले तो दूसरे चक्र में मन्त्र लेना आवश्यक नहीं। जिस मन्त्र में पिस २० अक्षर से अधिक अक्षर हो वह सिद्ध नहीं होता। सब महीनों में चैत्र का महीना मन्त्र दीक्षा लेने के लिये उत्तम है। वैशाख में मन्त्र दीक्षा लेने से रत्नों की प्राप्ति ज्येष्ठ तथा आषाढ में दीक्षा (मन्त्र) लेने से अपने और भाई को कष्ट होता है। श्रावण में मन्त्र लेने से मनोरथ की प्राप्ति होती है। भादो में मन्त्र लेने से पुत्र को कष्ट होता है। कुवार में मन्त्र लेने से धन की प्राप्ति होती है। कार्तिक में मन्त्र लेने से सिद्धि तथा अगहन में मन्त्र लेने से शत्रुभय और फाल्गुन में मन्त्र लेने से बुद्धि बढ़ती है। उक्त महीनों की गणना संक्रान्ति से करना चाहिये। मन्त्र लेने के लिए वार—रवि, बृध, बृहस्पति एवं शुक्रवार उत्तम हैं और तिथि—२, ३, ५, ६, ७, ९, १२ तथा १५ श्रेष्ठ हैं। भादों की छठ, कुवार की कृष्ण चतुर्दशी, कार्तिक की नवमी, अगहन की तीज, फाल्गुन की नवमी, पौष की नवमी, माघ शुक्ल चौथ, चैत्र की चतुर्दशी, वैशाख की तीज, ज्येष्ठ की गंगा दशहरा तथा पञ्चमी, आषाढ़ सुदी तीज, श्रावण शुक्ला पञ्चमी इन तिथियों में बिना विचारे मन्त्र लेना उचित है। सूर्यग्रहण सर्वोत्तम है। मंगला चौथी, रवि सप्तमी तथा सोमावती अमावास्य हो तो सूर्यग्रहण से भी अधिक फल देने वाली होती है। गुरु कृपा करके जिस दिन मन्त्र दे, वह भी समय उत्तम है।

गुरु शब्द की व्युत्पत्ति—

'गु' शब्दस्त्वन्धकारस्याद्रु शब्दस्तन्निरोधकः ।
अन्धकार निरोधत्वात् गुरुरित्याभिधीयते ॥

अर्थात् 'गु' अन्धकार (अज्ञान) 'रु' प्रकाश (ज्ञान) जो अन्धकार को दूर करके प्रकाश करे, वह गुरु कहलाता है या गृ-निगरणे-धातु से उर प्रत्यय होने पर गुरु शब्द की सिद्धि होती है। शिष्य के अज्ञान को निगलने वाला, लीन करने वाला या (दूर करने वाला)। गुरु ज्ञान देकर शिष्य के अन्तर में प्रवेश के द्वारा अज्ञान को निगल जाय या ज्ञान देकर अज्ञान को नष्ट करे, उसे गुरु कहते हैं। शिक्षा गुरु, दीक्षा गुरु तथा पारमार्थिक तत्त्व का उपदेशक गुरु कई प्रकार के होते हैं। उसमें ज्ञान-दाता सत्गुरु सर्वश्रेष्ठ सदा पूजनीय होते हैं। सद्गुरु माता और पीता तथा अन्य गुरुजनों से भी अधिक हैं। माता-पिता जन्म देते हैं, संसार सागर से पार नहीं कर पाते। सद्गुरु संसार से सदा के लिए मुक्त कर देते हैं। सर्वक्लेश नाशक हैं। अकारण करुणा वरुणा लय हैं, उनके समान कोई भी नहीं हो सकता।

पूजा के फूल—शिवजी की पूजा में मालती, चमेली, कुन्द, जूही, मौलसरी, रक्तजवा (अडहुल), मल्लिका (मोतिया), केतकी (केवड़ा) नहीं चढ़ाना चाहिये।

वेलपत्र धोकर उसका डण्ठल ऊपर का हिस्सा तोड़कर उल्टा करके चढ़ाना चाहिये। शिवजी के वास्ते झाल-करताल नहीं बजाना चाहिये। शिवजी की पूजा त्रिपुण्ड्र, भस्म तथा रुद्राक्ष की माला धारण करके करना चाहिये।

सूर्य की पूजा में—विल्वपत्र तथा शंख का जल न देवें। सूर्य की सात बार प्रदक्षिणा करना तथा १२ दण्डवत करना, कनेर का फूल चढ़ाने के बाद भी धोकर चढ़ा सकते हैं। हजार कनेर के बराबर एक शमी का पुष्प होता है। हजार शमी के बराबर एक धतूरे का फूल होता है। उससे हजार गुना उत्तम बृहती का पुष्प है। उससे सहस्र गुना कमल का

फूल श्रेष्ठ है। जो पुरुष भक्तिपूर्वक पृहवी (कटैया) के फूलों से शिवलिंग का पूजन करता है, उसको दस हजार गौदान का फल प्राप्त होता है। शिव का रूप हो जाता है। कार्तिक के महीने में सोमवार को धतूरे के पुष्पों से शिवजी की पूजा करे तो उसे साक्षात् शिवलोक मिलता है। जो पुरुष तुलसी के एक पत्र से शिवजी की पूजा करता है, वह अपने इक्कीस पीढ़ियों का उद्धार करके शिवलोक में रहता है।

धूप—चन्दन, अगर, कपूर, कूठ, गुगुल के चूर्ण में घी और शहद मिलाकर बनाया हुआ धूप सबसे उत्तम होता है। गुगुल शिवजी को बहुत ही प्यारा है। इसके नित्य धूप देने से अनन्त पुण्य का फल होता है।

(शिवपुराण)

श्री कृष्ण का अवतार रहस्य

अजन्मा का जन्म महोत्सव कैसा—इस रहस्य को स्वयं भगवान् ही जानते हैं। उनका जन्म कर्म दिव्य है। गोकुल में नन्द बाबा के घर कोई एक पुत्रेष्टि यज्ञ किया गया। नन्दबाबा पुत्र की वासना में लीन थे। ऐसा अलौकिक पुत्र चाहते थे यज्ञादि कर्म से पाना असंभव था। उनकी अवस्था भी ढल चुकी थी पर नन्द का प्रेमी हृदय द्रवित रहता था। व्रजवासी गण भी भगवान् से नन्द को उत्तम पुत्र प्राप्ति की प्रार्थना कर रहे थे।

इसी समय अन्तःपुर में यसोदा से नन्द जी कह रहे थे इस यज्ञ से मुझे जैसे पुत्र की इच्छा है वैसा नहीं होगा। क्योंकि—मैं जिसको सदा अपने पुत्र रूप में देखता हूँ वह अचल है। वह कर्म का फल नहीं है। मैं जिसको स्वप्न में देखता हूँ वह नारायण से भी अति सुन्दर है।

यह बात सुनकर यशोदा जी ने स्वप्न की बात पूछी। नन्द जी ने कहा—यशोदे तुम मेरी प्राण प्रिया हो मैं क्या छिपाऊँ उसे सुनो मैं स्वप्न में तथा मनोरथ में यही सदा सर्वदा देखता हूँ—

श्यामश्चञ्चलचारु दीर्घ नयनो बालस्तवांकस्थले।
दुग्धोद्गारिपयोधरेस्फुटमसौ क्रीडन् मयाऽऽलोक्यते।
स्वप्नस्तत् किमुजागरः किमथवेत्येतत्ननिश्चीयते।
सत्यं ब्रूहि सधर्मिणि स्फुरति किं सोयं तवाप्यन्तरे॥

दिव्यातिदिव्य नीलमणि सदृश श्याम सुन्दर वर्ण का एक बालक जिसके चञ्चल मनोहर नेत्र अत्यन्त विशाल है, तुम्हारी गोद में बैठकर तुम्हारे दुग्ध का पान कर रहा है और भाँति-भाँति के खेल कर रहा है। उसे देखकर मैं उपने को भूल जाता हूँ सो रहा हूँ या जाग रहा हूँ मुझे कुछ पता नहीं है। सच बताओ क्या तुमने भी स्वप्न में इस बालक देख है।

नन्द की बात सुनकर यशोदा जी परम प्रसन्न और गद्गद् स्वर में बोली। व्रजराज ? सचमुच मैं भी ठीक ऐसे ही बालक को सदा अपनी गोद में खेलते देखती हूँ। स्वप्न में उसे दूध पिलाती हूँ लाड प्यार करती हूँ। मैंने भी इसे पाना अति असम्भव समझ कर ही संकोचवस कभी आपको यह बात नहीं बताई थी। कहाँ मैं एक गोप की स्त्री और कहाँ दिव्य पारसमणि ! यह सुन कर नन्द बाबा बोले—ज्ञात होता है कि अखिल ब्रह्माणनायक भगवान् नारायण की कृपा दृष्टि से यह अलौकि दृश्य की दृष्टि गोचर हो रही है।

तदन्तर नारायण की सेवा में दृढनिष्ठा रखते हुए नन्द यशोदा ने तन, मन, वचन से एक वर्ष के लिये श्री हरिकी अतिप्रिय द्वादशी व्रत आरम्भ कर दिया। नन्द यशोद: के द्वादशीव्रत के संख्या के साथ ही साथ स्वप्न में देखे हुए दिव्य परम सुन्दर बालक को पुत्र रूप में पाने की इच्छा प्रतिदिन बढ़ती गयी। व्रत नियमपूर्ण हुआ। तब उन्होंने सामान्य निद्रा में स्वप्न में अपने इष्टदेव को चतुर्भुजी रूप में देखा भगवान् नारायण ने उन दोनों के समीप आकर कृपा दृष्टि करते हुए अति मधुर वाणी में कहा—अहो नन्द यशोदे तुम मुझ में आसक्त और मेरे परम भक्त हो। तुम इतने खिन्न होकर क्यों विलाप करते हो। अलसी के फूल के समान श्याम सुन्दर सुकुमार बालक तुम्हारी अनुभूति का विषय वककर तुम्हारे पुत्र रूप में तुम्हारे मन में नित्य निरम्तर क्रीड़ा करता है वही तुम्हारा अनुगामी है।

जगत् में वात्सल्य-प्रेम का प्रचार करने के लिए मेरी प्रेरणा से तुम्हारे ही अंश से द्रोण और धरा के रूप में स्वर्ग में प्रकट होकर प्रत्येक कल्प में तीव्र तपस्या किया करते हैं। उनकी तपस्या का फल ब्रह्मादि के लिये भी अलभ्य है नारायण की यह दिव्य वाणी सुनकर उस दिव्य बालक को पुत्र रूप में प्राप्त करने की प्रतीक्षा करने लगे यही स्थिति श्री यशोदा जी की भी थी।

T

(वृन्दावन चम्पूः) इति
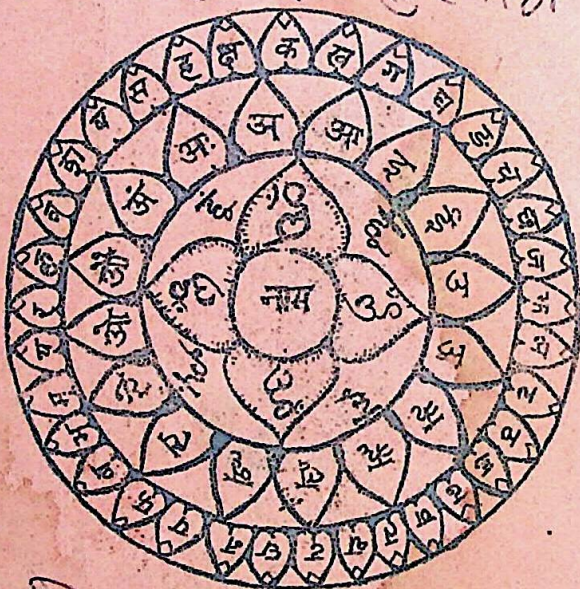
अथ रक्षायन्त्र

इस रक्षायन्त्र को कुमकुम (केशर) या मलया गिरि चन्दन से शुभ दिन या अच्छे नक्षत्र में भोजपत्र पर लिखकर श्वेत सूत्र में लपेट कर रेशमी वस्त्र से ढंककर कलश स्थापन करके पूजा करे और धारण करे तो सभी रोग शान्त होते हैं। शत्रु का भय भी नहीं रहता।—(अग्निपुराण)